2020 नववर्ष की शुभकामनाएं

ISSN-0970-6518

(विक्रमी संवत् 2076-77)

हरियाणा खेती

वार्षिक चंदा 150/-
आजीवन सदस्यता 1500/-

चौधरी चरण सिंह
हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय
हिसार

जनवरी — पौष–माघ

S	M	T	W	T	F	S
			1 पौष शु. षष्ठी	2 सप्तमी	3 अष्टमी	4 नवमी
5 दशमी	6 एकादशी	7 द्वादशी	8 त्रयोदशी	9 चतुर्दशी	10 पूर्णिमा	11 माघ कृ. एकम्
12 द्वितीया	13 तृतीया	14 चतुर्थी	15 पंचमी	16 षष्ठी	17 सप्तमी/अष्टमी	18 नवमी
19 दशमी	20 एकादशी	21 द्वादशी	22 त्रयोदशी	23 चतुर्दशी	24 अमावस्या	25 माघ शु. एकम्
26 द्वितीया	27 तृतीया	28 तृतीया	29 चतुर्थी	30 पंचमी	31 षष्ठी	

फरवरी — माघ–फाल्गुन

S	M	T	W	T	F	S
						1 माघ शु. सप्तमी
2 अष्टमी	3 नवमी	4 दशमी	5 एकादशी	6 द्वादशी	7 त्रयोदशी	8 चतुर्दशी
9 पूर्णिमा	10 फा.कृ.एकम्/द्वितीया	11 तृतीया	12 चतुर्थी	13 पंचमी	14 षष्ठी	15 सप्तमी
16 अष्टमी	17 नवमी	18 दशमी	19 एकादशी	20 द्वादशी	21 त्रयोदशी	22 चतुर्दशी
23 अमावस्या	24 फा.शु.एकम्	25 द्वितीया	26 तृतीया	27 चतुर्थी	28 पंचमी	29 पंचमी

मार्च — फाल्गुन–चैत्र

S	M	T	W	T	F	S
1 फा.शु.षष्ठी	2 सप्तमी	3 अष्टमी	4 नवमी	5 दशमी	6 एकादशी	7 द्वादशी
8 त्रयोदशी/चतुर्दशी	9 पूर्णिमा	10 चैत्र कृ. एकम्	11 द्वितीया	12 तृतीया	13 चतुर्थी	14 पंचमी/षष्ठी
15 सप्तमी	16 अष्टमी	17 नवमी	18 दशमी	19 एकादशी	20 द्वादशी	21 द्वादशी
22 त्रयोदशी	23 चतुर्दशी	24 अमावस्या	25 चैत्र शु. एकम्	26 द्वितीया	27 तृतीया	28 चतुर्थी
29 पंचमी	30 षष्ठी	31 सप्तमी				

अप्रैल — चैत्र–बैशाख

S	M	T	W	T	F	S
			1 अष्टमी	2 नवमी	3 दशमी	4 एकादशी
5 द्वादशी	6 त्रयोदशी	7 चतुर्दशी	8 पूर्णिमा/एकम्	9 द्वितीया	10 तृतीया	11 चतुर्थी
12 पंचमी	13 षष्ठी	14 सप्तमी	15 अष्टमी	16 नवमी	17 दशमी	18 एकादशी
19 द्वादशी	20 त्रयोदशी	21 चतुर्दशी	22 अमावस्या	23 अमावस्या	24 एकम्	25 द्वितीया
26 तृतीया	27 चतुर्थी	28 पंचमी	29 षष्ठी	30 सप्तमी		

मई — बैशाख–ज्येष्ठ

S	M	T	W	T	F	S
31 नवमी					1 अष्टमी	2 नवमी
3 दशमी	4 एकादशी	5 त्रयोदशी	6 चतुर्दशी	7 पूर्णिमा	8 एकम्	9 द्वितीया
10 तृतीया/चतुर्थी	11 पंचमी	12 षष्ठी	13 सप्तमी	14 अष्टमी	15 अष्टमी	16 नवमी
17 दशमी	18 एकादशी	19 द्वादशी	20 त्रयोदशी	21 चतुर्दशी	22 अमावस्या	23 एकम्
24 द्वितीया	25 तृतीया	26 चतुर्थी	27 पंचमी	28 षष्ठी	29 सप्तमी	30 अष्टमी

जून — ज्येष्ठ–आषाढ़

S	M	T	W	T	F	S
	1 दशमी	2 एकादशी	3 द्वादशी	4 त्रयोदशी/चतुर्दशी	5 पूर्णिमा	6 एकम्
7 द्वितीया	8 तृतीया	9 चतुर्थी	10 पंचमी	11 षष्ठी	12 सप्तमी	13 अष्टमी
14 नवमी	15 दशमी	16 एकादशी	17 एकादशी	18 द्वादशी	19 त्रयोदशी	20 चतुर्दशी
21 अमावस्या	22 एकम्	23 द्वितीया	24 तृतीया	25 चतुर्थी	26 पंचमी/षष्ठी	27 सप्तमी
28 अष्टमी	29 नवमी	30 दशमी				

जुलाई — आषाढ़–श्रावण

S	M	T	W	T	F	S
			1 एकादशी	2 द्वादशी	3 त्रयोदशी	4 चतुर्दशी
5 पूर्णिमा	6 एकम्	7 द्वितीया	8 तृतीया	9 चतुर्थी	10 पंचमी	11 षष्ठी
12 सप्तमी	13 अष्टमी	14 नवमी	15 दशमी	16 एकादशी	17 द्वादशी	18 त्रयोदशी
19 चतुर्दशी	20 अमावस्या	21 एकम्	22 द्वितीया	23 तृतीया	24 चतुर्थी	25 पंचमी
26 षष्ठी	27 सप्तमी/अष्टमी	28 नवमी	29 दशमी	30 एकादशी	31 द्वादशी	

अगस्त — श्रावण–भाद्रपद

S	M	T	W	T	F	S
30 द्वादशी	31 त्रयोदशी					1 त्रयोदशी
2 चतुर्दशी	3 पूर्णिमा	4 एकम्	5 द्वितीया	6 तृतीया	7 चतुर्थी	8 पंचमी
9 षष्ठी	10 षष्ठी	11 सप्तमी	12 अष्टमी	13 नवमी	14 दशमी	15 एकादशी
16 द्वादशी	17 त्रयोदशी	18 चतुर्दशी	19 अमावस्या/एकम्	20 द्वितीया	21 तृतीया	22 चतुर्थी
23 पंचमी	24 षष्ठी	25 सप्तमी	26 अष्टमी	27 नवमी	28 दशमी	29 एकादशी

सितम्बर — भाद्रपद–आश्विन

S	M	T	W	T	F	S
		1 चतुर्दशी	2 पूर्णिमा	3 एकम्	4 द्वितीया	5 तृतीया
6 चतुर्थी	7 पंचमी	8 षष्ठी	9 सप्तमी	10 अष्टमी	11 नवमी	12 दशमी
13 एकादशी	14 द्वादशी	15 त्रयोदशी	16 चतुर्दशी	17 अमावस्या	18 एकम्	19 द्वितीया/तृतीया
20 चतुर्थी	21 पंचमी	22 षष्ठी	23 सप्तमी	24 अष्टमी	25 नवमी	26 दशमी
27 एकादशी	28 द्वादशी	29 त्रयोदशी	30 चतुर्दशी			

अक्तूबर — आश्विन–कार्तिक

S	M	T	W	T	F	S
				1 पूर्णिमा	2 एकम्	3 द्वितीया
4 द्वितीया	5 तृतीया	6 चतुर्थी	7 पंचमी	8 षष्ठी	9 सप्तमी	10 अष्टमी
11 नवमी	12 दशमी	13 एकादशी	14 द्वादशी	15 त्रयोदशी/चतुर्दशी	16 अमावस्या	17 एकम्
18 द्वितीया	19 तृतीया	20 चतुर्थी	21 पंचमी	22 षष्ठी	23 सप्तमी	24 अष्टमी
25 नवमी	26 दशमी	27 एकादशी	28 द्वादशी	29 त्रयोदशी	30 चतुर्दशी	31 पूर्णिमा

नवम्बर — कार्तिक–मार्गशीष

S	M	T	W	T	F	S
1 एकम्	2 द्वितीया	3 तृतीया	4 चतुर्थी	5 पंचमी	6 षष्ठी	7 षष्ठी
8 सप्तमी/अष्टमी	9 नवमी	10 दशमी	11 एकादशी	12 द्वादशी	13 त्रयोदशी	14 चतुर्दशी
15 अमावस्या	16 एकम्/द्वितीया	17 तृतीया	18 चतुर्थी	19 पंचमी	20 षष्ठी	21 सप्तमी
22 अष्टमी	23 नवमी	24 दशमी	25 एकादशी	26 द्वादशी	27 द्वादशी	28 त्रयोदशी
29 चतुर्दशी	30 पूर्णिमा					

दिसम्बर — मार्गशीष–पौष

S	M	T	W	T	F	S
		1 एकम्	2 द्वितीया	3 तृतीया	4 चतुर्थी	5 पंचमी
6 षष्ठी	7 सप्तमी	8 अष्टमी	9 नवमी	10 दशमी	11 एकादशी	12 द्वादशी/त्रयोदशी
13 चतुर्दशी	14 अमावस्या	15 एकम्	16 द्वितीया	17 तृतीया	18 चतुर्थी	19 पंचमी
20 षष्ठी	21 सप्तमी	22 अष्टमी	23 नवमी	24 दशमी	25 एकादशी	26 द्वादशी
27 त्रयोदशी	28 त्रयोदशी	29 चतुर्दशी	30 पूर्णिमा	31 एकम्		

अवकाश

जनवरी
- 02 गुरु गोबिन्द सिंह जन्म दिवस
- 26 गणतन्त्र दिवस
- 30 बसंत पंचमी व सर छोटू राम जयन्ती

फरवरी
- 09 गुरु रविदास जन्म दिवस
- 21 महा शिवरात्रि

मार्च
- 10 होली
- 23 शहीदी दिवस

अप्रैल
- 02 राम नवमी
- 06 महावीर जयन्ती
- 14 डॉ. बी. आर. अम्बेडकर जयन्ती
- 25 भगवान परशुराम जयन्ती

मई
- 25 ईद-उल-फितर/ महाराणा प्रताप जयन्ती

जून
- 05 संत कबीर दास जयन्ती

जुलाई
- 31 शहीद उधम सिंह शहीदी दिवस

अगस्त
- 01 ईद-उल-जुहा (बकरीद)
- 03 रक्षा बंधन
- 12 जन्माष्टमी
- 15 स्वतन्त्रता दिवस

सितम्बर
- 23 हरियाणा वीर शहीदी दिवस

अक्तूबर
- 02 महात्मा गांधी जयन्ती
- 17 महाराजा अग्रसेन जयन्ती
- 25 दशहरा
- 31 महर्षि वाल्मीकि जयन्ती

नवम्बर
- 01 हरियाणा दिवस
- 14 दिवाली
- 15 विश्वकर्मा दिवस
- 30 गुरु नानक जयन्ती

दिसम्बर
- 25 बड़ा दिन

सभी रविवार व हर महीने के द्वितीय एवं चौथे शनिवार को छुट्टी रहेगी।

सीमित अवकाश

18 फरवरी	:	महर्षि दयानन्द सरसवती जयन्ती
10 अप्रैल	:	गुड फ्राईडे
07 मई	:	बुध पूर्णिमा
26 मई	:	गुरु अर्जन देव शहीदी दिवस
23 जुलाई	:	हरियाली तीज
30 अगस्त	:	मोहर्रम
30 अक्तूबर	:	मिलाद-उल-नबी/ईद-ए-मिलाद
04 नवम्बर	:	करवा चौथ
15 नवम्बर	:	गोवर्धन पूजा
20 नवम्बर	:	छठ पूजा
24 नवम्बर	:	गुरु तेग बहादुर शहीदी दिवस
26 दिसम्बर	:	शहीद उधम सिंह जन्म दिवस

उपर्युक्त में से वर्ष में से कोई भी तीन (3) छुट्टियां ली जा सकती हैं।

हरियाणा खेती

निदेशक, शिक्षा विभाग हरियाणा द्वारा उच्च/उच्चतर विद्यालयों के लिए उनके पत्र क्रमांक 25/34.7 4 पु. (2) दिनांक 4.9.74 द्वारा अनुमोदित

© कापीराइट प्रकाशकाधीन

वर्ष 53 | जनवरी 2020 | अंक 1

इस अंक में

लेख का नाम	लेखक का नाम	पृष्ठ
गेहूं की पछेती बिजाई : अधिक उपज प्राप्त करने के उपाय	✍ यश पाल सिंह सोलंकी, मीना सिवाच एवं नीरज पंवार	1
चने की फसल में कीट एवं रोग प्रबन्धन	✍ आर. एस. चौहान, नरेन्द्र सिंह एवं अश्वनी कुमार	1
अमरूद के रोग एवं बचाव	✍ राजेन्द्र सिंह, ममता एवं हवा सिंह सहारण	2
सफेद बटन मशरूम की खेती	✍ राकेश कुमार चुघ, सतीश कुमार एवं सूबेसिंह	3
प्याज़ व लहसुन में कीट व बीमारियों का नियन्त्रण	✍ जगत सिंह, मीना सिवाच एवं यशपाल सिंह सोलंकी	6
गेहूं के ज्वारे (व्हीट ग्रास) के लाभ	✍ नीता कुमारी, संगीता सी. सिंधु एवं प्रदीप कुमार चहल	6
जैविक खेती और इसके लाभ	✍ राकेश कुमार, विकास एवं किरण खोखर	7
मटर की उन्नत खेती	✍ जगत सिंह, मीना सिवाच एवं यशपाल सिंह सोलंकी	8
राया उत्पादन : उन्नत कृषि क्रियाएं	✍ रमेश कुमार, अशोक ढिल्लों एवं आशीष शिवरान	9
फल-फूल गिरना एवं फटना : समस्या एवं समाधान	✍ रणबीर सिंह सैनी, सुरेन्द्र सिंह एवं मुकेश कुमार	10
मौसम से संबन्धित जनश्रुतियों के आधार पर - मौसम का अनुमान	✍ ममता, प्रद्युमन भटनागर एवं जे. एन. भाटिया	11
खेत में फसल अवशेष विघटन के लाभ	✍ सोनिया रानी, मनोज कुमार शर्मा एवं प्रीति यादव	12
पराली : समुचित प्रबंधन उपाय	✍ सीमा, रीटा दहिया एवं कविता	20
पराली प्रबंधन में सुपर स्ट्रॉ मैनेजमेंट सिस्टम की उपयोगिता	✍ अनिल कुमार, कनिष्क वर्मा एवं राजेश कुमार	21
फसल अवशेष : प्रबंधन विकल्प एवं प्रतिस्पर्धी उपयोग	✍ अजय कुमार, जगदीश प्रशाद एवं अभिलाष	22
धान अवशेष जलाने से मिट्टी एवं मानव स्वास्थ्य पर असर	✍ सूबेसिंह, अनिल कुमार मलिक एवं भरत सिंह	25
बारानी खेती में जोखिम कम करने का सर्वोत्तम उपाय : जैविक खेती	✍ भरत सिंह घनघस, प्रदीप कुमार चहल एवं सूबे सिंह	26
फसल अवशेष प्रबन्धन व लाभ : किसान के काम की बात	✍ यशपाल सिंह एवं बलराज सिंह दूहन	27
हरित क्रांति-कृषोन्नति योजना का महत्व	✍ नीरू दूमरा	28
गुणकारी तुलसी	✍ सरोज दहिया एवं सुमन	28
Climate Change : Effect on Agriculture	✍ Ankush Sheoran, Ekta Arya and Satyawan Arya	29
Effect of Pesticide Residue in Foods on Human Health	✍ Ankush Sheoran, Ekta Arya and Sunita Sheoran	30
Water Management in Important Field Crops	✍ Manjeet, Parveen Kumar and Kuldeep Singh	31
कविता (नव वर्ष पर विशेष)	✍ सुषमा आनन्द	33

स्थाई स्तम्भ : फरवरी मास के कृषि कार्य **13**

तकनीकी सलाहकार
डॉ. आर. एस. हुड्डा
निदेशक, विस्तार शिक्षा

सह-निदेशक (प्रकाशन)
डॉ. बिमलेन्द्र कुमारी

संपादक
डॉ. सुषमा आनंद
सह-निदेशक (हिन्दी)

संकलन
डॉ. सूबे सिंह
सहायक निदेशक (विस्तार शिक्षा)

सम्पादक (अंग्रेज़ी)
सुनीता सांगवान
प्रकाशन अनुभाग

डीटीपी एवं आवरण सज्जा
राजेश कुमार
प्रकाशन अनुभाग

गेहूं की पछेती बिजाई : अधिक उपज प्राप्त करने के उपाय

✍ यश पाल सिंह सोलंकी, मीना सिवाच एवं नीरज पंवार[1]
कृषि विज्ञान केंद्र, रोहतक
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

गेहूं हरियाणा की एक महत्वपूर्ण अनाज वाली फसल है। पछेती बिजाई में गेहूं की पैदावार समय की बिजाई से कम होती है। इसलिए गेहूं की पछेती बिजाई के लिए किसानों को शीघ्र पकने वाली व रोग अवरोधक किस्मों का चुनाव करना चाहिए। गेहूं की पछेती बिजाई में अधिक उपज प्राप्त करने के लिए किसानों को निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए।

किस्मों का चुनाव : बिजाई के समय को ध्यान में रख कर ही किस्म का चुनाव करें। ऐसा करने से फसल की भरपूर पैदावार प्राप्त होगी। किसानों को अपने क्षेत्र के लिए अनुमोदित किस्मों का चुनाव करना चाहिए तथा जिस समय में बीजने की सिफारिश की गई हो उसी समय बीजें और अधिक पैदावार लें। पछेती बिजाई के लिए डब्ल्यू एच 1021, डब्ल्यू एच 1124, राज 3765, पी बी डब्ल्यू 373, पी बी डब्ल्यू 590, डी बी डब्ल्यू 90 व एच डी 3059 किस्मों की सिफारिश की जाती है।

बिजाई का समय : गेहूं की पछेती बिजाई का समय 26 नवम्बर से 25 दिसम्बर तक है। इसके बाद गेहूं की बिजाई करने से उचित लाभ नहीं मिलता।

बीज की मात्रा : गेहूं की पछेती बिजाई में अधिक पैदावार लेने के लिए किसानों को बीज की मात्रा 25 प्रतिशत बढ़ा देनी चाहिए। इसलिए किसान पछेती बिजाई में 50-60 कि.ग्रा. प्रति एकड़ बीज डालें।

बीज उपचार : दीमक से बचाव के लिए क्लोरपाइरीफॉस 60 मि.ली. को पानी में मिलाकर दो लीटर घोल बनाएं और इससे 40 कि.ग्रा. बीज को उपचारित करें। खुली कांगियारी से बचाव के लिए दो ग्राम वीटावैक्स या बाविस्टीन/किलो बीज से उपचारित करें। बायोफर्टिलाइज़र उपचार के लिए 200 मि.ली. एजोटोबैक्टर व 200 मि.ली. पी.एस.बी. प्रति 40 कि. ग्रा. बीज का प्रयोग करें।

बिजाई की विधि : गेहूं की बिजाई हमेशा अच्छे बत्तर व कतारों में करनी चाहिए। सीड-कम-फर्टिलाइजर ड्रिल मशीन से बिजाई करें और दो कतारों का अन्तर 18 सैं.मी. रखें।

धान-गेहूं फसल चक्र वाले क्षेत्रों में धान की कटाई के बाद गेहूं की बिजाई बिना जुताई किए ज़ीरो टिल सीड कम फर्टिलाइज़र ड्रिल मशीन से करें। इससे समय की बचत होती है, जुताई का खर्च भी कम होता है और गेहूं की पैदावार भी अच्छी होती है।

खाद की मात्रा : खाद हमेशा मिट्टी की जांच के आधार पर डालें। अधिक पैदावार के लिए सिंचित दशा में क्रमश: शुद्ध नत्रजन, फास्फोरस व पोटाश की मात्रा 60, 24 व 12 कि.ग्रा. प्रति एकड़ डालें। इसके लिए 50 कि.ग्रा. डी.ए.पी. तथा 110 कि.ग्रा. यूरिया (अथवा 150 कि.ग्रा. सिंगल सुपरफॉस्फेट तथा 130 कि.ग्रा. यूरिया), 20 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश प्रति एकड़ डालें। नत्रजन की आधी मात्रा व अन्य खादों की पूरी मात्रा तथा 10 कि.ग्रा. ज़िंक सल्फेट प्रति एकड़ बिजाई के समय डालें और नत्रजन का शेष भाग पहली सिंचाई के बाद डालें। रेतीली ज़मीनों में ये भाग पहली व दूसरी सिंचाई पर आधा-आधा डालें व गुड़ाई करें। गोबर व हरी खाद के प्रयोग से ज़मीन की उपजाऊ शक्ति बढ़ती है।

सिंचाई : पानी की उपलब्धता के अनुसार ही सिंचाई करें। पछेती बिजाई में पहली सिंचाई 28-30 दिन बाद दें। अन्य सिंचाइयां 20-25 दिन बाद दें। ◆

[1]क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, रोहतक

चने की फसल में कीट एवं रोग प्रबन्धन

✍ आर. एस. चौहान, नरेन्द्र सिंह एवं अश्वनी कुमार
कृषि विज्ञान केन्द्र, पंचकूला
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

दलहनी फसलों में चने का अपना एक प्रमुख स्थान है। हरियाणा में चना मुख्यत: हिसार, भिवानी और महेन्द्रगढ़ ज़िलों में उगाया जाता है। यद्यपि चने की पैदावार काफी कम है लेकिन इसमें प्रोटीन की मात्रा 17-25 प्रतिशत तक होती है तथा जनमानस के लिये प्रोटीन का एक सर्वोत्तम स्रोत है। किसी भी फसल की पैदावार को कम करने में कीड़ों व बीमारियों की मुख्य भूमिका है। यदि किसानों को कीड़ों व बीमारियों के नुकसान की प्रवृत्ति व लक्षणों की सही जानकारी हो तो समय पर प्रबन्धन के कदम उठाकर फसल उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है।

कीड़ों की रोकथाम

कटुआ सूण्डी: इस कीट की सूण्डी उगते हुए पौधों को तने के बीच से अथवा बढ़ते हुए पौधों की शाखाओं को काटकर नुकसान पहुंचाती है।

रोकथाम : इस कीट की रोकथाम के लिए 80 मि.ली. फेनवलरेट 20 ई. सी. या 50 मि.ली. साइपरमैथरीन 25 ई.सी. या 150 मि.ली. डैकामैथरिन 2.8 ई.सी. को 100 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें या 0.4% फेनवलरेट पाऊडर 10 कि.ग्रा. मात्रा को प्रति एकड़ धूड़ें।

फली छेदक सूण्डी: यह चने की फसल का सबसे नुकसानदायक कीट है। इस कीट की सूण्डी प्राय: हरे रंग की होती है जो पत्तों, कलियों व फलियों (टांट) पर आक्रमण करती है तथा फलियों में बन रहे दानों को खा कर नष्ट कर देती है।

रोकथाम : इस कीट की रोकथाम के लिये 200 मि.ली. मोनोक्रोटोफॉस 36 एस.एल. या 80 मि.ली. फेनवलरेट 20 ई.सी. या 125 मि.ली. साइपरमैथरिन 10 ई.सी. या 150 मि.ली. डैकामैथरिन 2.8 ई.सी. या नोवालुरान (रिमोन) 10 ई.सी. 150-200 मि.ली. या 400 ग्राम कार्बेरिल 50 डब्ल्यू.पी. को 100 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें तथा 15 दिन बाद दोहराएं।

बीमारियों की रोकथाम

उखेड़ा : यह रोग प्राय: रेतीली मिट्टी व शुष्क क्षेत्रों में अधिक होता है। बिजाई के लगभग 3-6 सप्ताह बाद रोगग्रस्त पौधों की पत्तियां मुरझाकर लुढ़क जाती हैं परन्तु उनमें हरापन बना रहता है। तने को चाकू से लम्बाई में काटने पर अन्दर से इसकी वाहिकी काली या भद्दे रंग की दिखाई देती हैं।

रोकथाम : हालांकि उखेड़ा रोग के लक्षण लवणता, भूमि में कम नमी तथा दीमक के आक्रमण द्वारा भी हो सकते हैं। इसलिये उपचार से पहले इन कारणों की जांच करना अति आवश्यक है। उखेड़ा रोग की रोकथाम के लिये भूमि में नमी बनाए रखें तथा 10 अक्तूबर से पहले बिजाई न करें। उखेड़ा रोगरोधी किस्में एच 208, चना नं. 1, चना नं. 3, व हरियाणा चना नं. 5 की बिजाई न करें। बीज को बाविस्टीन 2.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. या जैविक फफूंदनाशक ट्राइकोडरमा विरिडी 4 ग्राम प्रति कि.ग्रा. +विटावैक्स 1 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करें।

तना गलन: पत्तियां बदरंग हुए बिना गिर जाती हैं। भूमि की सतह पर

[1]क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, रोहतक

सफेद फफूंद तने को चारों ओर से घेर लेता है तथा बाद में पिण्ड से दिखाई पड़ते हैं। हालांकि ग्रसित पौधों की रस वाहिकी में कोई भद्दापन नहीं दिखाई देता। अधिक वर्षा और फसल की अधिक बढ़वार की दशा में इस रोग के आने की अधिक सम्भावना होती है।

जड़ गलन : इस रोग का प्रकोप फसल की अंकुरण अवस्था में या सिंचित क्षेत्रों में जब फसल बड़ी होती है, तब होता है। भूमि की सतह के पास पौधे के तने पर गहरे भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं। ग्रसित पौधों के तने व पत्तियां हल्के पीले रंग के हो जाते हैं। जड़ गल जाने के कारण पौधा खींचने पर ज़मीन में ही रह जाता है।

ऐसकोकाइटा झुलसा रोग: इस बीमारी से पत्तों, तनों व फलियों पर हल्के भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं जिनकी परिधि में हरे भूरे रंग के दायरे दिखाई देते हैं। बाद में ये धब्बे लम्बे हो जाते हैं तथा इन पर काली धारियां काले बिन्दु के समान दिखाई देती हैं। पौधे का ग्रसित भाग जकड़ जाता है तथा धीरे-धीरे रोग सारे खेत में फैल जाता है।

आल्टरनेरिया झलसा रोग: पत्तों पर धीरे-धीरे, गोल भूरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। रोग बढ़ने पर ये धब्बे हल्के पीले रंग में बदल जाते हैं परिणाम स्वरुप पौधे गिर कर सूख जाते हैं।

ग्रे-मोल्ड : शुरू में पत्तियां भूरे रंग में बदलने लग जाती हैं। ऊपर की टहनी थोड़ी झुक जाती है जिन में फफूंद दिखाई देती है। रोग ग्रस्त टहनियां तथा तने बाद में सड़ने लगते हैं।

रोकथाम :

1. जिन खेतों में झुलसा रोग का आक्रमण रहा हो, उनमें चने की फसल न लें।
2. चने की हरियाणा चना नं. 3, सी-235 या गौरव किस्में उगाएं क्योंकि ये किस्में झुलसा रोग के प्रति प्रतिरोधी है।
3. साफ व रोगमुक्त बीज की बिजाई करें तथा बीजगत संक्रमण से बचाव के लिये बैविस्टीन (2.5 ग्राम 1 किलो बीज) से बीज उपचार करें।
4. रोगग्रस्त पौधों तथा अवशेषों को जलाकर नष्ट कर दें। ◆

किसानों के लिए आवश्यक सूचना

कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय ने 8 अगस्त, 2018 को SO.3951(ई) के तहत एक सूचना जारी की है कि 12 कीटनाशक (इनसेक्टिसाइड्स+ फंजीसाइड्स+हर्बीसाइड्स) का प्रयोग/इस्तेमाल 8 अगस्त 2018 से ही बन्द कर दिया गया है। इनकी सूची इस प्रकार है:

8 अगस्त, 2018 से प्रतिबंधित कीटनाशक

1. **बेनोमाईल** (Benomyl)
2. **कार्बाराइल** (Carbaryl)
3. **डाय जिनॉन** (Diazinon)
4. **फेनारिमोल** (Fenarimol)
5. **फेन्थियॉन** (Fenthion)
6. **लिन्यूरॉन** (Linuron)
7. **मैथॉक्सी इथाइल मरकरी क्लोराइड** (Methoxy Ethyl Mercury Chloride)
8. **मिथाइल पैराथियॉन** (Methyl Parathion)
9. **सोडियम सायनाइड** (Sodium Cyanide)
10. **थियोमेटॉन** (Thiometon)
11. **ट्रायडमॉर्फ** (Tridemorph)
12. **ट्राइफ्लूरालिन** (Trifluralin)

नोट : किसी भी लेख में अगर इन कीटनाशकों के प्रयोग के बारे में लिखा है तो उसे रद्द माना जाए।

अमरूद के रोग एवं बचाव

✍ **राजेन्द्र सिंह, ममता एवं हवा सिंह सहारण**
उद्यान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

अमरूद पौष्टिक गुणों से भरपूर फल है। यह हर प्रकार की मिट्टी व जलवायु में उगाया जा सकता है। सूखेपन में भी इसकी सहनशक्ति है। लेकिन इसमें उक्ठा, फलगल या टहनीमार रोग प्रमुख रूप से लगते हैं।

उक्ठारोग (विल्ट)

जड़ों के रोगग्रस्त होने के काफी समय बाद लक्षण दिखाई देते हैं। सवंमित पौधों की पत्तियां पीली पड़कर गिर जाती हैं और बाद में पौधा सूखने लगता है। इसके अन्य कारक में सूत्रकृमि, विभिन्न तत्वों का अभाव व असन्तुलन तथा जलवायु प्रभावित करते हैं।

रोकथाम

पौधे उन्हीं खेतों में लगाएं जहां पानी के निकास की अच्छी व्यवस्था हो। बहुत अधिक भारी मिट्टी में पौधे न लगायें। वर्षा या सिंचाई के पानी को तने के चारों ओर खड़ा न होने दें। रोगग्रस्त पौधों को जड़ सहित उखाड़कर नष्ट कर दें। गड्ढे को फोरमेलिन द्वारा उपचार करके दोबारा पौधा लगायें।

हर पौधे के थाले में 15 ग्राम बाविस्टिन मार्च, जून व सितम्बर में डालकर पानी लगा दें तथा मार्च व सितम्बर में पौधों पर 0.3 प्रतिशत ज़िंक सल्फेट का छिड़काव करें।

टहनी मार रोग या फल गलन

फल पकने वाली अवस्था में फलों कें ऊपर गोलाकार अनेक धब्बे बनते हैं जोकि बाद में आपस में मिलकर धंस जाते हैं तथा नारंगी रंग के फफूंद उत्पन्न हो जाते हैं। टहनियों पर यदि संक्रमण हो जाये तो डालियां या शाखायें पीछे से सूखने लगती हैं। फलों के संक्रमण होने के फलस्वरूप बनते हुए फल छोटे, करड़े और काले रंग के होते हैं या कई बार पहचान बहुत देर में होती है।

रोकथाम

डालियों को काटकर 0.3 प्रतिशत कॉपर ऑक्सीक्लोराइड के घोल का छिड़काव करें और 15 दिन की अवधि पर फल लगाने के बाद 2-3 छिड़काव करें।

आल्टरनेरिया लीफ स्पॉट

पत्तियों पर गहरे भूरे रंग के धब्बे बनते हैं। रोगग्रस्त पत्तियां झुलसकर गिर जाती हैं।

रोकथाम

कॉपर ऑक्सीक्लोराइड के 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव 2 सप्ताह के अन्तर पर 2-3 बार करें। ◆

बेटी बचाओ
बेटी पढ़ाओ

सफेद बटन मशरूम की खेती

✍ राकेश कुमार चुघ, सतीश कुमार एवं सूबेसिंह[1]
पादप रोग विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारतवर्ष कृषि प्रधान देश होने के कारण यहां पर कृषि व्यर्थ जैसे गेहूं, चावल व सरसों का भूसा आदि बहुतायत में मिलते हैं तथा जलवायु की विविधता के कारण यहां पर विभिन्न प्रकार के खुम्ब आसानी से उगाए जा सकते हैं। खुम्बी की खेती चूंकि कमरे के अंदर की जाती है, इसलिए भूमि, जिस पर बढ़ती हुई जनसंख्या का पहले से ही बहुत अधिक दबाव है खुम्ब लगाने के लिए उतनी आवश्यक नहीं है। इसकी खेती कच्चे या पक्के कमरे अथवा किसी अन्य स्थान पर अस्थाई छप्पर या छत डालकर की जा सकती है और थोड़े समय में अधिक मात्रा में उत्पादन किया जा सकता है। देश के आर्थिक विकास में महिलाओं का विशेष योगदान है।

खुम्बी या मशरूम, एक प्रकार की फफूंद है। प्राकृतिक रूप से (अपने आप) उगने वाली खुम्ब कुछ तो खाने योग्य होती हैं, तथा कुछ ज़हरीली भी हो सकती हैं। लेकिन वैज्ञानिक ढंग से उगाई जाने वाली मशरूम की सभी किस्में खाने योग्य होती हैं।

बरसात मे मौसम में यह खाद के ढेरों पर चरागाहों में, खेतों में और जंगलों में उग जाती है। आम भाषा में हमें सांप की छतरी, धरती के फूल और पर्वतीय क्षेत्रों में इन्हें 'च्यू' के नाम से जाना जाता है। प्रकृति में पाई जाने वाली खुम्बों की संख्या 2000 तक आंकी गई है। इसमें से लगभग 70 की खेती की जा सकती है।

खुम्ब की खेती छोटे, भूमिहीन किसानों, बेरोज़गार युवकों व ग्रामीण महिलाओं के लिए आमदनी का अच्छा साधन है। खुम्ब की खेती में अन्य फसलों की भांति भूमि की आवश्यकता नहीं होती। इसकी खेती कच्चे या पक्के कमरे अथवा अस्थाई छप्पर (झोंपड़ी) बना कर की जा सकती है। विश्व भर में लगभग एक दर्जन खुम्ब की प्रजातियों का उत्पादन व्यापारिक स्तर पर किया जाता है परंतु भारत में मुख्य रूप से चार प्रजातियां अधिक प्रचलित हैं जिनकी खेती व्यापारिक स्तर पर की जाती है :

1. सफेद बटन या योरोपियन मशरूम
2. आयस्टर मशरूम या ढिंगरी मशरूम
3. पैडी स्ट्रा, ट्रॉपिकल या चाइनीज़ मशरूम
4. सफेद दूधिया खुम्ब

खुम्ब एक स्वादिष्ट एवं पौष्टिक आहार है। जिसमें प्रोटीन, खनिज, लवण, विटामिन जैसे पोषक पदार्थ प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। खुम्ब की अपनी एक आकर्षक खुशबू होती है जिसके कारण इसे खाने में ज़्यादा पसन्द किया जाता है। आरम्भ में लोग इसे स्वाद के लिए खाते थे किन्तु अब इसे पौष्टिक तत्वों तथा औषधीय उपयोगिता के कारण गुणकारी आहार के रूप में खाया जाने लगा है। खुम्बों में पाये जाने वाले प्रोटीन से शाकाहारी लोग अपने भोजन में प्रोटीन की कमी को पूरा कर सकते हैं। खुम्बों में प्रोटीन की मात्रा सब्जियों व फलों की अपेक्षा 20-25 प्रतिशत, चावल से 7.3 प्रतिशत, गेहूं से 13.2 प्रतिशत, दूध से 25.2 प्रतिशत, बन्दगोभी से 2 गुणा, सन्तरे से 4 गुणा व सेब से 12 गुणा अधिक पाई जाती है। खुम्ब में कम कैलोरी, कम वसा, कम स्टार्च, कम कोलेस्ट्रोल होने के कारण खुम्ब का आहार उन व्यक्तियों के लिए वरदान है जो मोटापे, मधुमेह, अधिक तनाव व हृदय रोग से पीड़ित हैं।

मौसम के आधार पर कम लागत में जो खुम्ब की विभिन्न प्रजातियां उगाई जा सकती हैं उनका लगाने का तरीका इस प्रकार है :

व्यापारिक स्तर पर काश्त के लिए सफेद बटन खुम्ब, आयस्टर या ढींगरी के साथ-साथ दूधिया खुम्ब भी लोकप्रिय है। इन खुम्बियों के उत्पादन के लिए भिन्न-भिन्न तापमान व नमी की आवश्यकता होती है और इनकी काश्त भी अलग-अलग समय पर की जाती है।

क्रम संख्या	खुम्ब की किस्म	महीना	अनुकूल तापमान (डिग्री सैल्सियस)		नमी (प्रतिशत)
			क्वक जाल फैलाव	खुम्बी उगाना	
1.	सफेद बटन	अक्तूबर-फरवरी	22-24	14-18	80-90
2.	ढींगरी या आयस्टर	फरवरी-अप्रैल	25-30	22-26	80-90
3.	दूधिया खुम्ब (मिल्की मशरूम)	जुलाई-अक्तूबर	25-35	30-35	80-90

इसकी उपज के लिए मुख्य कदम निम्न हैं :

1. कम्पोस्ट बनाना
2. मिट्टी से ढकना (केसिंग)
3. भराई व बिजाई
4. खुम्ब निकालना

कम्पोस्ट बनाना

दो प्रकार से तैयार की जा सकती है

1. लघु विधि
2. लम्बी विधि

लघु विधि : दोनों विधियों में कम्पोस्ट मिश्रण को बाहर फर्श पर सड़ाया जाता है। परन्तु लघु विधि में लगभग 2 सप्ताह बाद एक खास कमरे में भर दिया जाता है जिसे चैम्बर या टनल के नाम से जाना जाता है। ठण्डे स्थानों पर इस चैम्बर के अन्दर कम्पोस्ट को गर्म करने के लिए बॉयलर का प्रयोग किया जाता है परन्तु हमारे यहां कम्पोस्ट के सूक्ष्म जीवियों की क्रिया से काम चल जाता है। चैम्बर का फर्श जालीदार होता है तथा उसमें नीचे प्रेशर से ब्लोअर द्वारा हवा फेंकी जाती है जो सारे कम्पोस्ट का तापमान एक समान बनाए रखती है जिससे कम्पोस्ट जल्दी तैयार हो जाती है। चैम्बर में सात फुट तक कम्पोस्ट भरी जाती है और कम्पोस्ट का तापमान 3-4 घंटों के लिए बायलर की भाप द्वारा 58-60 डिग्री सैल्सियस तक किया जाता है ताकि कम्पोस्ट में कीड़े बीमारियां व सूत्रकृमि नष्ट हो जाएं। इसके बाद कम्पोस्ट का तापमान 6-7 दिन 48 डिग्री सैल्सियस रखा जाता है। जब कम्पोस्ट में अमोनिया गैस प्रोटीन में बदल जाती है तब कम्पोस्ट का तापमान कम हो जाता है या फिर ताज़ी हवा से कम किया जा सकता है। इस विधि से खुम्ब उत्पादन लगभग दोगुना हो जाता है। हरियाणा में ज़्यादातर किसान लम्बी विधि द्वारा खाद तैयार करते हैं क्योंकि ज़्यादातर किसान छोटे स्तर पर ही खुम्ब उत्पादन करते हैं।

लम्बी विधि : जिस पदार्थ पर सफेद बटन खुम्ब लगाई जाती है, उसे कम्पोस्ट कहते हैं, जो गेहूं या धान या सरसों के भूसे में अन्य पदार्थ मिलाकर बनाया जाता है। कम लागत द्वारा तैयार करने की विधि को लंबी विधि कहते हैं तथा इसमें लगभग एक महीना लगता है।

इन दिए गए सूत्रों में से किसी एक को किसान लेकर कम्पोस्ट बनाना शुरू करें, जो भी तूड़ा/भूसा/पराल लें वह बारिश में भीगी हुई तथा खराब नहीं होनी चाहिए।

[1]सहायक निदेशक, विस्तार शिक्षा निदेशालय, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार

सूत्र नं. 1	सूत्र नं. 2	सूत्र नं. 3
गेहूं भूसा 300 कि.ग्रा.	गेहूं भूसा 300 कि.ग्रा.	सरसों भूसा 300 कि.ग्रा.
गेहूं छानस 30 कि.ग्रा.	मुर्गी खाद 60 कि.ग्रा.	मुर्गी खाद 60 कि.ग्रा.
जिप्सम 30 कि.ग्रा.	गेहूं छानस 7.5 कि.ग्रा.	गेहूं छानस 8 कि.ग्रा.
किसान खाद 9 कि.ग्रा.	जिप्सम 30 कि.ग्रा.	जिप्सम 20 कि.ग्रा.
यूरिया 3.6 कि.ग्रा.	किसान खाद 6 कि.ग्रा.	यूरिया 4 कि.ग्रा.
म्यूरेट ऑफ पोटाश 3 कि.ग्रा.	यूरिया 2 कि.ग्रा.	सिंगल सुपर फास्फेट 2 कि.ग्रा.
सिंगल सुपर फास्फेट 3 कि.ग्रा.	म्यूरेट ऑफ पोटाश 2 कि.ग्रा.	शीरा 5 कि.ग्रा.
शीरा 5 कि.ग्रा.		

कम्पोस्ट बनाने का तरीका : भूसे को फर्श पर फैलाकर अच्छी तरह भिगों लें, जहां तक हो सके कम्पोस्ट बनाने की जगह पक्की होनी चाहिए, नहीं तो ईंटों को बिछाकर जगह पक्की कर लें ताकि कम्पोस्ट में मिट्टी आदि न मिलें। साफ-सुथरी कच्ची जगह भी उपयोग की जा सकती है। भूसे को फर्श पर बिछाकर अच्छी तरह एक दिन (24 घंटे) पानी से भिगोएं।

अब इस भीगे हुए भूसे में खाद व अन्य सामान जो सूत्र में दिए गए हैं मिलाकर निश्चित अवधि पर पलटाई करें जिसका कार्यक्रम निम्न है :

0 दिन : गीले भूसे को एक फुट की तह में बिछा देते हैं तथा उसके ऊपर रसायन उर्वरक 6 कि.ग्रा. यूरिया, 3 कि.ग्रा. सुपर फॉस्फेट, 3 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश तथा 15 कि.ग्रा. गेहूं का छानस बिखेर दें तथा अच्छी तरह मिला दें। इसके बाद 5 फुट ऊचां, 5 फुट चौड़ा तथा लम्बाई सुविधानुसार एक ढेर बना दें। ढेर बनाने के 48 घंटे के अंदर ही तापमान 70-75 डिग्री सेल्सियस तक पहुंच जाता है।

+6 दिन (पहली पलटाई) : ढेर का बाहरी भाग हवा में खुला रहने से सूख जाता है जिससे खाद अच्छी तरह नहीं सड़ता। पलटाई देते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि अदंर का भाग बाहर व बाहर का भाग अंदर आ जाए तथा सूखे भाग पर पानी का हल्का छिड़काव कर दें। इस समय 3 कि.ग्रा. किसान खाद, 1.2 किलो यूरिया तथा 15 कि.ग्रा. चोकर मिला दें व ढेर को दोबारा 0 दिन जैसा बना दें।

+10 वें दिन (दूसरी पलटाई) : खाद के ढेर के बाहर के एक फुट खाद को अलग निकाल लें तथा इस पर पानी का छिड़काव करके पलटाई करते समय ढेर के बीच में डाल दें। इस पलटाई के समय खाद में 5 कि.ग्रा. शीरा 10 लीटर पानी में मिलाकर ढेर बनाने से पहले ही सारे खाद में अच्छी तरह मिला दें।

+13 वें दिन (तीसरी पलटाई) : खाद को जैसे दूसरी पलटाई दी थी उसी तरह तीसरी पलटाई देनी चाहिए। बाहर के सूखे भाग पर हल्का पानी अवश्य छिड़कें। खाद में नमी न तो अधिक और न कम होनी चाहिए। खाद में 30 कि.ग्रा. जिप्सम मिला लेना चाहिए। खाद के ढेर को ठीक उसी तरह से तोड़ना चाहिए जैसे कि 10वें दिन दूसरी पलटाई पर तोड़ा गया और फिर दोबारा से वैसा ही ढेर बना देना चाहिए।

16वें दिन (चौथी पलटाई) : कम्पोस्ट के ढेर में पलटाई करें, तथा नमी देखें, नमी ठीक होनी चाहिए।

19वें दिन (पांचवी पलटाई) : कम्पोस्ट में पलटाई कर ढेर बना दें

22वें दिन (छठी पलटाई) : पलटाई कर फिर से ढेर बना दें।

25वें दिन (सातवीं पलटाई) : पलटाई करें व ढेर फिर से बना दें।

28वें दिन (आठवीं पलटाई) : इस दिन कम्पोस्ट का परीक्षण अमोनिया तथा नमी के लिए किया जाता है। नमी की उचित मात्रा की पहचान करने का सबसे आसान तरीका यह है कि थोड़ी सी कम्पोस्ट को मुट्ठी में लेकर हल्का सा दबाएं, पानी की बूंदें अंगुलियों के बीच से बाहर आनी चाहिएं, परन्तु पानी की धार नहीं बननी चाहिए, यदि पानी की मात्रा आवश्यकता से अधिक है तो कम्पोस्ट के ढेर को खोल कर हवा लगा देनी चाहिए। कम्पोस्ट के ढेर से कम्पोस्ट को सूंघें, इसमें अमोनिया गैस की बदबू (जैसी की पहली पलटाई के समय आती थी) नहीं होनी चाहिए, यदि रह गई तो एक दिन छोड़ कर एक दो पलटाई करें, जब तक कि यह बदबू खत्म नहीं हो जाए। यदि पानी की मात्रा उचित है व अमोनिया गैस की बदबू नहीं है तो कम्पोस्ट तैयार है।

कम्पोस्ट में बिजाई (स्पानिंग) : खुम्ब की खेती में प्रयोग होने वाले बीज को खुम्ब का बीज (स्पान) कहते हैं। खुम्ब की अच्छी पैदावार लेने के लिए बीज शुद्ध व अच्छी किस्म का होना चाहिए। खुम्ब के बीज में चिपचिपापन अथवा बदबू नहीं होनी चाहिए। अनाज के हर दाने पर खुम्ब के कवक का सफेद जाला होना चाहिए। बीच में किसी प्रकार से सड़ने जैसी गन्ध नहीं आनी चाहिए। थैलों में किसी प्रकार का द्रव्य रिसाव नहीं होना चाहिए।

खुम्ब का बीज पोलिप्रोपिलिन (प्लास्टिक) बैगों में गेहूं या ज्वार या बाजरा के दानों पर तैयार किया जाता है। बिजाई के लिए 100 कि.ग्रा. तैयार खाद के लिए 500 ग्राम बीज काफी है। बीज की अग्रिम बुकिंग कम से कम एक महीना पहले अवश्य करवा लें। जब कम्पोस्ट बनाना शुरू करें, उसी समय जितने क्विंटल भूसा (तूड़ा) लिया है उतना ही किलो स्पान बुक करा दें। (क्योंकि हम जितनी तूड़ी या भूसे की मात्रा से कम्पोस्ट बनाना शुरू करते हैं, तो 28 दिनों बाद कम्पोस्ट की मात्रा दुगुनी हो जाती है। मान लो आपने तीन क्विंटल तूड़े से कम्पोस्ट बनाना शुरू किया था, तो तैयार कम्पोस्ट का वज़न लगभग 6 क्विंटल होगा)।

कम्पोस्ट में स्पान मिलाने से पहले ढेर को खोलकर ठंडा होने के लिए छोड़ दें, गर्म कम्पोस्ट में स्पानिंग नहीं करनी चाहिए, खाद में बीज मिलाकर या तो पॉलीथीन बैगों या धुले हुए खाली खाद के बैगों में भरा जाता है या रैकों पर बिछाया जाता है। ऊपर थोड़ा सा बिखेर दें और खाद के ऊपर 2 प्रतिशत फोरमेलिन में भिगोया हुआ अखबार या पॉलीथीन शीट बिछा दें। कमरे का तापमान 24-25 डिग्री सैल्सियस (स्पानिंग 15 अक्तूबर के बाद करें, उस समय अंदर का तापमान ठीक होता है) तथा नमी 80-90 प्रतिशत बनाए रखें। आवश्यकतानुसार अखबार के ऊपर तथा कमरे में सुबह शाम स्प्रेयर पंप से पानी का हल्का छिड़काव करें। यदि स्पानिंग (बिजाई) बैगों में की है तो इसमें कम्पोस्ट एक से सवा फुट तक भरना चाहिए व रैकों के ऊपर प्लास्टिक की चादर बिछाकर बिजाई करते हैं तो कम्पोस्ट की ऊंचाई लगभग छः इंच होनी चाहिए।

बीज को रखने में सावधानियां : खुम्ब का बीज अधिक तापमान पर शीघ्र नष्ट हो जाता है। खुम्ब का बीज 40 डिग्री सैल्सियस के तापमान पर 48 घंटों में भर जाता है। इस तरह के बीज में सड़ने की बदबू आने लगती है। बीज को गर्मियों में रात को लाना चाहिए। हो सके तो थर्मोकोल शीट के बने डिब्बे में लिफाफों के बीच में बर्फ के टुकड़े रख कर लाएं। बीज पर धूप नहीं लगनी चाहिए। यदि बीज बस से लाएं तो बीज को आगे इंजन के पास न रखें।

बीज का भंडारण : खुम्ब का ताज़ा बना हुआ बीज कम्पोस्ट में शीघ्र फैलता है। खुम्ब शीघ्र निकलने शुरु हो जाते हैं तथा पैदावार भी अधिक मिलती है। फिर भी कभी-कभी भंडारण करना आवश्यक हो तो खुम्ब का रैफ्रीजरेटर में ही भंडारण करें। ऐसा करने से 10-15 दिन तक बीज खराब नहीं होता।

केसिंग मिश्रण : खाद में जब स्पान पूरी तरह फैल जाए तो उसके ऊपर मिट्टी तथा धान के छिलके की राख या अन्य किसी मिश्रण की डेढ इंच की एक परत बिछाई जाती है जिसको हम केसिंग कहते हैं। केसिंग खुम्ब की वानस्पतिक वृद्धि में सहायक होती है, यदि केसिंग न की जाए तो बहुत ही कम मात्रा में खुम्ब निकलते हैं। केसिंग के बाद में नमी बनी रहती है जो खुम्ब के बनने के लिए आवश्यक है।

केसिंग मिश्रण कैसा हो : कोई भी पदार्थ जो पानी को जल्दी सोख ले, धीरे-धीरे छोड़ें और मुरमुरा हो, केसिंग के लिए ठीक है। हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय के अनुसंधान से पता चला है कि चावल के छिलके की राख तथा खेत की मिट्टी 1:1 (भार के अनुपात में) सबसे अच्छी केसिंग मिश्रण है। पुरानी खुम्ब में प्रयोग की हुई खाद व बगीचे की मिट्टी और रेत 4:1 या गली-सड़ी हुई गोबर की खाद व दोमट मिट्टी 1:1 केसिंग मिश्रण के लिए उपयुक्त पाए गये हैं। ध्यान रहे कि गोबर की खाद डेढ साल पुरानी व गली-सड़ी होनी चाहिए। केसिंग मिश्रण को कीटाणुरहित करने के लिए 5 प्रतिशत फोरमेलिन के घोल से तर करके पॉलिथीन की चादर से 3-4 दिन तक ढक देना चाहिए। इसके बाद पॉलीथीन हटाकर इसे उलटते पलटते हैं जिससे कि फोरमेलिन की गंध निकल जाए।

केसिंग करना या केसिंग मिश्रण कैसे बिछाएं : अनुकूल वातावरण में स्पानिंग के 15-20 दिन बाद खुम्ब का जाला खाद (कम्पोस्ट) में फैल जाता है, इसके पश्चात् ही केसिंग मिश्रण खाद पर बिछाना ठीक रहता है। केसिंग करने से पहले अखबार या पॉलीथीन चादर खाद के ऊपर से हटा दें। इसके बाद खाद के ऊपर एक इंच केसिंग मिश्रण की तह मिछा दें। केसिंग की सतह समतल रखनी चाहिए। केसिंग करने के तुरंत बाद फोरमेलिन 2 प्रतिशत व बाविस्टिन 0.05 प्रतिशत के घोल का छिड़काव कर देना चाहिए।

केसिंग के बाद पर्यावरण बनाना : खाद के ऊपर केसिंग बिछा देने के बाद 7-10 दिनों तक तापमान 23-25 डिग्री सैल्सियस रहना चाहिए। जब छोटी-छोटी सफेद खुम्बियां निकलने लगें तो तापमान 18 डिग्री सैल्सियस से नीचे होना चाहिए। यह तापमान तब तक बनाए रखें जब तक खुम्ब निकलते रहें। दिसम्बर के अंतिम सप्ताह तथा जनवरी में तापमान काफी कम हो जाता है जिसके कारण खुम्ब कम निकलते हैं। तापमान धुएं वाले ईंधन से नहीं बढ़ाएं। खुम्ब निकलने वाले कमरे में नमी का होना ज़रूरी है और जब खुम्ब निकलने शुरू हो जाएं तो नमी 80-90 प्रतिशत होनी चाहिए। आमतौर पर यह देखा गया है कि खुम्ब उत्पादक केवल खाद पर ही पानी का छिड़काव करते हैं। नमी बनाए रखने के लिए कमरे की खिड़कियों तथा दरवाज़ों पर गीली बोरी लटका कर रखनी चाहिए व इन पर पानी छिड़कते रहें ताकि बाहर से जो हवा आए वह भी नम हो जाए।

हवा का संचालन : कम्पोस्ट/खाद में जाला फैलते समय दिन में एक या दो बार शुद्ध हवा का देना ज़रूरी है तथा खुम्ब निकलते समय खुम्ब भवन में हवा का संचालन अच्छी प्रकार होना चाहिए अर्थात जब स्पान फैल रहा हो तो कमरे को कम खोलें व जब खुम्बियां निकलनी शुरू हो जाएं तो कमरे को सुबह व शाम को 2-3 घंटे खोलें। कच्चे छप्परों में हवा का संचालन अपने आप ठीक रहता है। पिन हैड बनने के लिए कार्बन डाईऑक्साइड की मात्रा 0.3 प्रतिशत से ज़्यादा नहीं होनी चाहिए तथा खुम्ब निकलते समय इसकी मात्रा 0.08-0.1 प्रतिशत से अधिक न हो।

खुम्ब की तुड़ाई तथा भण्डारण : बिजाई के 20-25 दिन बाद या केसिंग 7-8 दिन बाद खुम्ब के पिन हैड दिखाई देने लगते हैं। बटन की अवस्था में खुम्ब की टोपी का आकार 3-5 सैं.मी. हो जाए तथा इसकी टोपी खुली न हो तो इस अवस्था में खुम्ब तोड़ने योग्य होती है। तोड़ने के लिए टोपी को अंगूठे से हल्का सा पकड़ कर घड़ी की सूई की तरफ या फिर उल्टी तरफ हल्का घुमा देते हैं तथा खुम्ब को धीरे से ऊपर की ओर खींच लेते हैं। खुम्ब के तने के निचले सिरे पर केसिंग मिट्टी तथा कवक धागे होते हैं जिन्हें तेज़ चाकू से काटकर अलग कर दिया जाता है। खुम्ब की तोड़ाई प्रतिदिन होती है। खुम्ब रगड़ लगने से तथा ज़्यादा देर हवा में रखने से भूरी हो जाती है जिससे इसकी कीमत बाज़ार में घट जाती है। बाद में खुम्बियों को साफ पानी में धोते हैं। अधिक सफेदी लाने के लिए खुम्ब उत्पादक खुम्ब को पोटाशियम मैटाबाईसल्फाईट के घोल से धो लेते हैं। इसके पश्चात् कुछ देर सूखने के लिए रख देते हैं फिर खुम्ब को पॉलीथीन बैगों में भर दिया जाता है। खुम्ब के साधारणत- 200 ग्राम के पैकेट बनाए जाते हैं तथा इन पॉलीथीन के लिफाफों में हवा के लिए 2-3 छेद कर दिए जाते हैं।

सावधानियां :

- ❑ खुम्ब उगाने के लिए खाद/कम्पोस्ट उन्हीं पदार्थों से बनाना चाहिए जो आसानी से उपलब्ध हो सके। अच्छी खाद ज़्यादा पैदावार देती है। कम्पोस्ट में गोबर की खाद न मिलाएं।
- ❑ कम्पोस्ट बनाने के लिए पहले स्पान की उपलब्धता अवश्य सुनिश्चित कर लें क्योंकि कई बार बीज समय पर न मिलने से अनावश्यक परेशानी का सामना करना पड़ सकता है।
- ❑ खाद पक्के फर्श पर ही बनाएं।
- ❑ खाद में नमी की मात्रा 65-70 प्रतिशत होनी चाहिए।
- ❑ अच्छी पैदावार के लिए कमरे का तापमान तथा नमी उचित रखें।
- ❑ जब खुम्बी की टोपी फटी-फटी नज़र आए तथा खुलने लगे तो कमरे में नमी की मात्रा बढ़ाएं तथा खुम्बी में सीधी तेज़ हवा न लगने दें।
- ❑ जब डंडी लंबी होने लगे तो कमरे में स्वच्छ हवा का प्रवेश होने दें जिससे कार्बन डाईऑक्साईड की मात्रा कम हो जाती है।
- ❑ कमरे की सफाई का विशेष ध्यान रखें।
- ❑ केसिंग स्पान फैलने के बाद ही करें।
- ❑ खुम्ब सावधानी से तोड़ें तथा उस जगह पर केसिंग कर दें।
- ❑ खुम्ब भवन में प्रवेश कम से कम हो।
- ❑ कम्पोस्ट बनाना सितम्बर माह में पहले शुरू नहीं करना चाहिए।
- ❑ रैक में खाद की ऊंचाई 6 इंच रखें, यदि बैगों में खुम्ब लगा रहे हैं तो खाद की ऊंचाई 12-15 इंच रखें।

बीज प्राप्त करने के स्रोत :

1. पौध रोग विभाग चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार।
2. राष्ट्रीय खुम्ब अनुसंधान एवं प्रशिक्षण केन्द्र चम्बाघाट, सोलन, हिमाचल प्रदेश।
3. हरियाणा एग्रो इण्डस्ट्रीज़, खुम्ब केन्द्र, मूरथल, ज़िला सोनीपत, हरियाणा।
4. डिविज़न ऑफ माइक्रो बायोलोजी एण्ड प्लांट पैथोलोजी आई.ए.आर.आई, नई दिल्ली। ◆

प्याज़ व लहसुन में कीट व बीमारियों का नियन्त्रण

✍ **जगत सिंह, मीना सिवाच एवं यशपाल सिंह सोलंकी**

कृषि विज्ञान केन्द्र, रोहतक

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

प्याज़ व लहसुन रबी मौसम में उगाई जाने वाली हरियाणा प्रान्त की मुख्य सब्जी फसलें हैं। किसान इनकी भरपूर पैदावार लेकर अच्छी कमाई कर सकते हैं। इन फसलों का निर्यात करके विदेशी मुद्रा भी कमाई जा सकती है। इन फसलों की भरपूर पैदावार व अच्छी गुणवत्ता के लिये कीट व बीमारियों का नियन्त्रण बहुत ही आवश्यक है जो कि निम्न प्रकार से है :

कीट व उनकी रोकथाम

चूरड़ा (थ्रिप्स) : उपर्युक्त फसलों को हानि पहुंचाने वाला यह मुख्य कीट है। इस कीट के पीले, भूरे, बेलनाकार शिशु व प्रौढ़ पत्तों से रस चूसते हैं। ग्रसित पत्तों पर सफेद धब्बे पड़ जाते हैं तथा बाद में पत्ते मुड़ जाते हैं। अधिक प्रकोप होने पर पत्ते चोटी से चांदीनुमा (सिलवरी टॉप) होकर सूख जाते हैं। फूल उगने के समय इस कीट के प्रकोप से बीज की पैदावार पर अधिक असर पड़ता है। कीड़े का आक्रमण फरवरी से मई तक रहता है।

रोकथाम व नियन्त्रण : नीचे दिये गये 'क' व 'ख' भाग में से बारी-बारी से किसी एक कीटनाशक को 200-250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार छिड़काव 10-15 दिन के अन्तर पर दोहरायें।

क. 1. 75 मि.ली. फैनवैलरेट 20 ई.सी.।
2. 175 मि.ली. डैल्टामैथ्रिन 28 ई.सी.।
3. 60 मि.ली. साइपरमैथ्रिन 10 ई.सी.।

ख. 300 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी.।

इस कीट की रोकथाम के लिये लहसुन का तेल 150 मि.ली. तथा इतनी ही मात्रा में टी पोल को 120-160 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ 3-4 छिड़काव 10 दिन के अन्तर पर करें।

नोट:

1. एक ही कीटनाशक का बार-बार प्रयोग न करें। आवश्यकतानुसार बारी-बारी से 'क' व 'ख' में दी गई कीटनाशकों को छिड़कें।
2. प्राय: छिड़काव की ज़रूरत मार्च-अप्रैल में पड़ती है।
3. छिड़काव के कम से कम 15 दिन बाद ही प्याज़ को प्रयोग में लाएं।
4. किसी चिपकने वाले पदार्थ जैसे कि सैलवेट-99, 10 ग्राम या ट्रिटान 50 मि.ली. प्रति 100 लीटर घोल के साथ मिलाएं जिससे दवा पत्तियों पर चिपक जाए।

बीमारियां व उनकी रोकथाम

पर्पल ब्लाच : फूलों की डंडी पर तथा पत्तियों पर जामुनी या गहरे-भूरे धब्बे बनते हैं जो बाद में बीज को हानि पहुंचाते हैं। इस बीमारी का प्रकोप उपर्युक्त फसलों की कन्द वाली फसल पर भी होता है।

रोकथाम: इस बीमारी की रोकथाम के लिये फसल पर इंडोफिल एम-45 या कॉपर-आक्सीक्लोराईड-50 की 400-500 ग्राम मात्रा को 200-250 लीटर पानी में घोलकर तथा किसी चिपकने वाले पदार्थ (सैलवेट-99,10 ग्राम या ट्रिटान 50 मि.ली. प्रति 100 लीटर घोल) के साथ मिलाकर प्रति एकड़ 10-15 दिन के अन्तर पर छिड़काव करें। ◆

गेहूं के ज्वारे (व्हीट ग्रास) के लाभ

✍ **नीता कुमारी, संगीता सी. सिंधु एवं प्रदीप कुमार चहल**

खाद्य एवम पोषण विभाग, गृहविज्ञान महाविद्यालय

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

गेहूं के ज्वारे को जिसे हम आम तौर पर व्हीट ग्रास भी बोलते हैं, बहुत स्वास्थयवर्धक व चिकित्सीय गुणों वाले होते हैं। प्राचीन काल से ही हिन्दुस्तान के चिक्त्सिक गेहूं के ज्वारों को विभिन्न रोगों जैसे अस्थि - संध शोध, कैंसर,त्वचा रोग, मोटापा, डायबिटीज़ आदि के उपयोग में प्रयोग कर रहे हैं। जब गेहूं के बीज को अच्छी उपजाऊ ज़मीन में बोया जाता है तो कुछ ही दिनों में वह अंकुरित होकर बढ़ने लगता है और उसमें पत्तियां निकलने लगती हैं। जब यह अंकुरण पांच छह पत्तों का हो जाता है तो अंकुरित बीज का यह भाग गेहूं का ज्वार कहलाता है।

गेहूं के ज्वारों में अनेक अनमोल पोषक तत्व व रोग निवारक गुण पाए जाते हैं, यही कारण है कि इसे अमृत तुल्य आहार का दर्जा दिया गया है।

गेहूं के ज्वारों में सबसे प्रमुख तत्व क्लोरोफिल पाया जाता है जिसकी संरचना, हूबहू, मानव रक्तकण में पाए जाने वाले हीमोग्लोबिन के सदृश्य होती है। गेहूं के ज्वारे रक्त व रक्त-संचार सबंधी रोगों, रक्त की कमी, उच्च रक्तचाप, सर्दी, अस्थमा, ब्रोंकाइटिस, स्थायी सर्दी, साईनस, पाचन संबंधी रोग, पेट में छाले, कैंसर, आंतों की सूजन, दांत संबंधी समस्याओं जैसे दांतों का हिलना, मसूडों में खून आना, एक्ज़िमा आदि चर्मरोग, गुर्दे संबंधी रोग, यौन-संबंधी रोग, कान के रोग, थायराइड ग्रंथि के रोग व अनेक ऐसे रोग जिनमें रोगी निराश हो गया हो, उनके लिए गेहूं के ज्वारे अनमोल औषधि सिद्ध होते हैं। इसलिए कोई भी रोग हो तथा उस रोग का किसी भी चिकित्सा पद्धति से ही उपचार क्यों न चल रहा हो, साथ ही साथ गेहूं के ज्वारे के रस का सेवन करके तीव्रता से लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

हीमोग्लोबिन रक्त में पाया जाने वाला एक प्रमुख घटक है हीमोग्लोबिन में हेमिन नामक तत्व पाया जाता है, रासायनिक रुप में गेहूं के ज्वारे के क्लोरोफिल व हेमिन दोनों में ही कार्बन में काफी समानता है। क्लोरोफिल व हेमिन दोनों में ही कार्बन, ऑक्सीजन, हाइड्रोजन व नाइट्रोजन के अणुओं की संख्या व संरचना करीब-करीब एक जैसी होती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि हिमोग्लोबिन व क्लोरोफिल में काफी समानता है और इसीलिए गेहूं के ज्वारों को हरा रक्त कहा जाता है।

यह वनज नियन्त्रण करता है व पसीने की दुर्गंध समाप्त करता है। यह मधुमेह में बहुत उपयोगी है। यह ब्लड में शुगर को नियंत्रित करता है। गेहूं के ज्वारे का रस शरीर को ऑक्सीजन उपलब्ध कराता है। यह कैंसर कोशिकाओं का नाश करता है। यह स्वस्थ कोशिकाओं की श्वसन क्रिया को बढ़ाता है।

गेहूं के पौधे में गोमांस से तीन गुणा अधिक प्रोटीन होता है। गेहूं के ज्वारे का रस डायबिटीज़ के लिए और वृद्धावस्था में बहुत अच्छा है। इसका लगातार सेवन करने से बीमारियां दूर भाग जाती हैं।

दांत मे दर्द या गले में खराश हो तो गेहूं के ज्वारे के रस के गरारे करें। गेहूं के ज्वारों (व्हीट ग्रास) में रोग निरोधक व रोग निवारक शक्ति पाई जाती है। गेहूं के ज्वारों की प्रकृति क्षारीय होती है। इसलिए ये पाचन संस्थान व रक्त द्वारा आसानी से अवशोषित हो जाते हैं।

गेहूं के ज्वारे (व्हीट ग्रास) से रोगी तो स्वस्थ होता ही है अपितु सामान्य स्वास्थ्य वाला व्यक्ति भी अपार शक्ति को प्राप्त करता है। इसका नियमित सेवन करने वाले व्यक्ति को शरीर में थकान तो कभी आती ही नहीं है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि कोई भी चिक्तिसा पद्धति गेहुं के ज्वारों (व्हीट ग्रास) में आड़े नहीं आती है, क्योंकि 'गेहूं के ज्वारे' ओषधि ही नहीं वरन श्रेष्ठ आहार भी है। ◆

जैविक खेती और इसके लाभ

✍ राकेश कुमार, विकास एवं किरण खोखर
मृदा विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

जैविक खेती कृषि की वह विधि है जो संश्लेषित उर्वरकों एवं संश्लेषित कीटनाशकों के अप्रयोग या न्यूनतम प्रयोग पर आधारित है तथा जो भूमि की उर्वरा शक्ति को बनाए रखने के लिये फसल चक्र, हरी खाद, कम्पोस्ट आदि का प्रयोग करती है। दूसरे शब्दों में, जैविक खेती एक ऐसी प्रणाली है जो सिंथेटिक इनपुट (जैसे कि उर्वरक, कीटनाशक, हार्मोन, फीड एडिटिव्स) के उपयोग से काफी हद तक बचती है या बाहर निकल जाती है।

संपूर्ण विश्व में बढ़ती हुई जनसंख्या एक गंभीर समस्या है, बढ़ती हुई जनसंख्या के साथ भोजन की आपूर्ति के लिए मानव द्वारा खाद्य उत्पादन की होड़ में अधिक से अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए तरह-तरह की रासायनिक खादों, ज़हरीले कीटनाशकों का उपयोग पारिस्थितिकी प्रभावित करता है, जिससे भूमि की उर्वरा शक्ति खराब हो जाती है, साथ ही वातावरण प्रदूषित होता है तथा मनुष्य के स्वास्थ्य में गिरावट आती है।

प्राचीन काल में मानव स्वास्थ्य के अनुकूल तथा प्राकृतिक वातावरण के अनुरूप खेती की जाती थी, जिससे जैविक और अजैविक पदार्थों के बीच आदान-प्रदान का चक्र (पारिस्थितिकी तंत्र) निरन्तर चलता रहा था, जिसके फलस्वरूप जल, भूमि, वायु तथा वातावरण प्रदूषित नहीं होता था। भारत वर्ष में प्राचीन काल से कृषि के साथ-साथ गौ पालन किया जाता था, जिसके प्रमाण हमारे ग्रंथों में प्रभु कृष्ण और बलराम हैं जिन्हें हम गोपाल एवं हलधर के नाम से संबोधित करते हैं अर्थात कृषि एवं गोपालन संयुक्त रूप से अत्यधिक लाभदायी था, जोकि प्राणी मात्र व वातावरण के लिए अत्यन्त उपयोगी था। परन्तु बदलते परिवेश में गौ पालन धीरे-धीरे कम हो गया तथा कृषि में तरह-तरह की रासायनिक खादों व कीटनाशकों का प्रयोग हो रहा है जिसके फलस्वरूप जैविक और अजैविक पदार्थों के चक्र का संतुलन बिगड़ता जा रहा है और वातावरण प्रदूषित होकर, मानव जाति के स्वास्थ्य को प्रभावित कर रहा है। अब हम रासायनिक खादों, ज़हरीले कीटनाशकों के उपयोग के स्थान पर, जैविक खादों एवं दवाइयों का उपयोग कर, अधिक से अधिक उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं जिससे भूमि, जल एवं वातावरण शुद्ध रहेगा और मनुष्य एवं प्रत्येक जीवधारी स्वस्थ रहेंगे।

भारतवर्ष में ग्रामीण अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार कृषि है और कृषकों की मुख्य आय का साधन खेती है। हरित क्रांति के समय से बढ़ती हुई जनसंख्या को देखते हुए एवं आय की दृष्टि से उत्पादन बढ़ाना आवश्यक है। अधिक उत्पादन के लिये खेती में अधिक मात्रा में रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशक का उपयोग करना पड़ता है जिससे सामान्य व छोटे कृषक के पास कम जोत में अत्यधिक लागत लग रही है और जल, भूमि, वायु और वातावरण भी प्रदूषित हो रहा है। साथ ही खाद्य पदार्थ भी ज़हरीले हो रहे हैं। इसलिए इस प्रकार की उपर्युक्त सभी समस्याओं से निपटने के लिये गत वर्षों से निरन्तर टिकाऊ खेती के सिद्धान्त पर खेती करने की सिफारिश की गई, जिसे प्रदेश के कृषि विभाग ने इस विशेष प्रकार की खेती को अपनाने के लिए, बढ़ावा दिया जिसे हम जैविक खेती के नाम से जानते हैं। भारत सरकार भी इस खेती को अपनाने के लिए प्रचार-प्रसार कर रही है।

मध्य प्रदेश में सर्वप्रथम 2001-02 में जैविक खेती का आन्दोलन चलाकर प्रत्येक ज़िले के प्रत्येक विकास खण्ड के एक गांव में जैविक खेती प्रारम्भ की गई और इन गांवों को जैविक गांव का नाम दिया गया। मई 2002 में राष्ट्रीय स्तर का कृषि विभाग के तत्वाधान में भोपाल में जैविक खेती पर सेमीनार आयोजित किया गया जिसमें राष्ट्रीय विशेषज्ञों एवं जैविक खेती करने वाले अनुभवी कृषकों द्वारा भाग लिया गया जिसमें जैविक खेती अपनाने हेतु प्रोत्साहित किया गया। जैविक खेती से मानव स्वास्थ्य का बहुत गहरा सम्बन्ध है। इस पद्धति से खेती करने में शरीर तुलनात्मक रूप से अधिक स्वस्थ रहता है व औसत आयु भी बढती है एवं हमारी आने वाली पीढ़ी भी अधिक स्वस्थ रहेगी। कीटनाशक और खाद का प्रयोग खेती में करने से फसल ज़हरीली होती है।

जैविक खेती से होने वाले लाभ

कृषकों की दृष्टि से लाभ

- भूमि की उपजाऊ क्षमता में वृद्धि हो जाती है।
- सिंचाई अंतराल में वृद्धि होती है।
- रासायनिक खाद पर निर्भरता कम होती है।
- फसलों की उत्पादकता में वृद्धि होती है।
- फसल उत्पादन की लागत में कमी एवं आय में वृद्धि होती है।

मिट्टी की दृष्टि से

- जैविक खाद के उपयोग करने से भूमि की गुणवत्ता में सुधार आता है।
- भूमि की जल धारण क्षमता बढ़ती है।
- भूमि से पानी का वाष्पीकरण कम होता है।
- जैविक खेती मृदा स्वास्थ्य में सुधार करती है।

पर्यावरण की दृष्टि से

- भूमि के जल स्तर में वृद्धि होती है।
- मिट्टी, खाद्य पदार्थ और ज़मीन में पानी के माध्यम से होने वाले प्रदूषण में कमी आती है।
- कचरे का उपयोग, खाद बनाने में, होने से बीमारियों में कमी आती है।
- जैविक खेती जैव विविधता को प्रोत्साहित करती है।

जैविक खेती की विधि रासायनिक खेती की विधि की तुलना में बराबर या अधिक उत्पादन देती है अर्थात जैविक खेती मृदा की उर्वरता एवं कृषकों की उत्पादकता बढ़ाने में पूर्णत: सहायक है। वर्षा आधारित क्षेत्रों में जैविक खेती की विधि और भी अधिक लाभदायक है। जैविक विधि द्वारा खेती करने से उत्पादन की लागत तो कम होती ही है इसके साथ ही कृषक भाइयों को आय अधिक प्राप्त होती है तथा अंतराष्ट्रीय बाज़ार की स्पर्धा में जैविक उत्पाद अधिक खरे उतरते हैं। जिसके फलस्वरूप सामान्य उत्पादन की अपेक्षा कृषक अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं। आधुनिक समय में निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्या, पर्यावरण प्रदूषण, भूमि की उर्वरा शक्ति का संरक्षण एवं मानव स्वास्थ्य के लिए जैविक खेती की राह अत्यन्त लाभदायक है। मानव जीवन के सर्वांगीण विकास के लिए नितान्त आवश्यक है कि प्राकृतिक संसाधन प्रदूषित न हों, शुद्ध वातावरण रहे एवं पौष्टिक आहार मिलता रहे, इसके लिये हमें जैविक खेती की कृषि पद्धतियों को अपनाना होगा जोकि हमारे नैसर्गिक संसाधनों एवं मानवीय पर्यावरण को प्रदूषित किये बगैर समस्त जनमानस को खाद्य सामग्री उपलब्ध करा सकेगी तथा हमें खुशहाल जीने की राह दिखा सकेगी। ◆

मटर की उन्नत खेती

✍ **जगत सिंह, मीना सिवाच एवं यशपाल सिंह सोलंकी**
कृषि विज्ञान केन्द्र, रोहतक
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा राज्य में सर्दी के मौसम में उगाई जाने वाली सब्जी फसलों में मटर का महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह खाद, पानी आदि संसाधनों की कम मात्रा से सफलतापूर्वक उगाई जा सकती है। इसके हरे, अपरिपक्व दानों को दूसरी सब्जियों जैसे कि आलू, गाजर, पनीर, खुम्भ आदि के साथ पकाकर बड़े चाव से खाया जाता है। इसके हरे दानों को संवर्धन के बाद बेमौसम में भी सब्जी के रूप में खाया जा सकता है। यह प्रोटीन तथा विटामिन 'ए' का बहुत अच्छा स्रोत है। यह वातावरण की नाईट्रोजन को मिट्टी में मिलाकर खेत को उपजाऊ बनाने में भी सहायक है। किसान नीचे दी गई विभिन्न उन्नत कृषि क्रियाएं अपनाकर इसकी खेती से अधिक लाभ कमा सकते हैं :

उन्नत किस्में

आर्केल : यह एक अगेती किस्म है। यह बुवाई के बाद 60-65 दिन में पहली तुड़ाई दे देती है। पौधे बौने, सिकुड़े हुए और फलियां हरी, लंबी (8-10 सैं.मी.) होती हैं। इसकी हरी फलियों की औसत पैदावार 20-25 क्विंटल प्रति एकड़ होती है ।

पीएच-1 : यह भी एक अगेती किस्म है। बुवाई से पहली तुड़ाई तक 70 दिन लेती है। इसकी फलियां लंबी हरी तथा अच्छी भरी हुई होती हैं। इसकी हरी फलियों की पैदावार 30-35 क्विंटल प्रति एकड़ होती है ।

बोनविले : यह अर्द्ध-पिछेती किस्म है। इसके दाने मीठे तथा सिकुड़े हुए होते हैं। यह अक्तूबर के मध्य से बुवाई के लिये उपयुक्त है। यह करीब 100 दिन में पहली तुड़ाई दे देती है। इसकी औसत पैदावार 30 क्विंटल प्रति एकड़ होती है ।

पंजाब-89 : यह मध्यम किस्म है। इसके पौधे दर्मियाने आकार के व अच्छी बढ़वार वाले होते हैं। यह किस्म 85-90 दिन में पहली तुड़ाई दे देती है। फलियां हरी, चमकीली तथा दानों से भरी हुई होती हैं। फलियों में दानों की संख्या 9-10 होती है। हरी फलियों की औसत पैदावार 50-60 क्विंटल प्रति एकड़ है ।

बुवाई का समय

इसकी बुवाई मध्य सितम्बर से मध्य नवम्बर तक की जाती है। अगेती किस्मों की बुवाई सितम्बर के दूसरे पखवाड़े से लेकर अक्तूबर के पहले सप्ताह तक करते हैं। पिछेती किस्म के लिये बुवाई का समय अक्तूबर के अन्त से लेकर मध्य नवम्बर उपयुक्त होता है ।

बीज की मात्रा

अगेती फसल के लिये 30-40 किलोग्राम और मध्यम व पिछेती फसल के लिये 20-30 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ पर्याप्त है ।

बुवाई की विधि

बुवाई के लिए कतार से कतार का फासला 30-40 सैं.मी. तथा पौधे से पौधे का फासला 3-5 सैं.मी. रखते हैं। जब मटर को नई ज़मीन मे बोया जाता है, तब बीज का उपचार राईजोबियम के टीके से करें, जो कि पौधों की नाईट्रोजन बनाने को शक्ति को बढ़ाता है। टीके को 10 प्रतिशत चीनी या गुड़ के घोल में मिलाकर एक एकड़ के लिए बीज में अच्छी तरह मिलाकर बीज को छाया में सुखाएं ।

खेत की तैयारी

खेत की तैयारी 2-3 बार जुताई करके तथा सुहागा लगाकर करें। बुवाई से पहले पलेवा करें ।

खाद एवं उर्वरक

अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की आठ टन खाद को बुवाई से 15-20 दिन पहले खेत में अच्छी तरह मिला दें। 6 किलोग्राम नाईट्रोजन (12.5 किलोग्राम यूरिया खाद) व 20 किलोग्राम फास्फोरस (125 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट) प्रति एकड़ बुवाई के समय डालें। 12.5 किलोग्राम यूरिया बुवाई के 4-6 सप्ताह बाद खड़ी फसल में लगायें।

सिंचाई

मटर की सफल खेती के लिये सिंचाई की विधि सबसे महत्वपूर्ण सस्य क्रिया है। बुवाई से पहले पलेवा करें, जो कि पारम्परिक (फ्लड) विधि से किया जा सकता है। पहली सिंचाई (बुवाई के बाद) फूल आने पर करें। अगली सिंचाई ज़रूरत हो तो फलियों में दाने बनते समय करें। बुवाई के बाद की सिंचाई फव्वारा विधि से करना काफी फायदेमंद पाया गया है। इससे पानी की बचत के साथ-साथ पैदावार में भी काफी बढ़ोत्तरी पाई गई है। एक सिंचाई करने के लिये फव्वारा एक घंटे तक चलाना पर्याप्त होता है ।

अन्तः कृषि क्रियाएं व खरपतवार नियंत्रण

आवश्यकतानुसार निराई-गुड़ाई करें। पैन्डीमैथालीन 400-500 ग्राम प्रति एकड़ (स्टाम्प 30 प्रतिशत, 1.3 - 1.7 लीटर प्रति एकड़) का बुवाई के 2-4 दिन बाद छिड़काव करने से खरपतवार का नियंत्रण किया जा सकता है ।

फसल की तुड़ाई

हरी फलियों को उचित अवस्था पर तोड़ें।

हारिनकारक कीट व उनका नियन्त्रण

चूरड़ा : इसके शिशु व प्रौढ़ छोटी फसल की पत्तियों से रस चूसते हैं, जिससे पत्तियां मुड़ जाती हैं तथा सूख जाती हैं।

नियन्त्रण : 60 मि.ली. साइपरमेथरीन 25 ई.सी./150 मि.ली. साइपरमैथरीन 10 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में मिलाकर एक एकड़ में छिड़काव करें ।

सुरंगी कीट : इस कीट की सूण्डियाँ पत्तियों में सुरंग बनाकर अन्दर ही अन्दर खाती हैं जिससे टेढ़ी-मेढ़ी सफेद धारियां बन जाती हैं।

नियन्त्रण : 400 मि.ली. डाइमैथोएट (रोगोर) 30 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़काव करें। आवश्यकता हो तो अगला छिड़काव 15 दिन के अन्तर पर करें।

फल भेदक सूण्डियां : ये सूण्डियां फलियों में छेद करके दानों को खा जाती हैं।

नियन्त्रण : जैसा चूरड़ा के लिये बताया गया है।

बीमारियां व उनकी रोकथाम

पाऊडरी मिल्ड्यू : पत्तियों के दोनों ओर, फलियों व तने पर सफेद चकत्ते दिखाई देते हैं।

नियन्त्रण : फसल पर घुलनशील सल्फर (सल्फैक्स) 500 ग्राम या बाविस्टीन 200 ग्राम या कैराथेन 40 ई.सी. 80 मि.ली. प्रति एकड़ 200 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

जड़ गलन या विल्ट : पौधों की जड़ें गल जाती हैं और पौधे मुरझा जाते हैं।

नियन्त्रण : बाविस्टिन या कैप्टान 2 ग्राम प्रति कलोग्राम बीज की दर से बीज का उपचार करें। 3 वर्ष का फसल चक्र अपनायें। ◆

राया उत्पादन : उन्नत कृषि क्रियाएं

✍ **रमेश कुमार, अशोक ढिल्लों एवं आशीष शिवरान**
कृषि विज्ञान केन्द्र, महेन्द्रगढ़
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

राया हरियाणा प्रदेश के दक्षिण-पश्चिम क्षेत्रों की रबी मौसम की प्रमुख तिलहनी फसल है। प्रदेश के इन क्षेत्रों में इस फसल की खेती लगभग दो तिहाई क्षेत्रफल में होती है। इस क्षेत्र के किसान फसल उत्पादन की उन्नत कृषि क्रियाएं अपनाकर अच्छी पैदावार लेने की कोशिश करते हैं। यही कारण है कि राया उत्पादन में प्रदेश का औसत पैदावार की दृष्टि से देश में पहला स्थान है। परन्तु अधिकांश क्षेत्र में एक ही तरह के फसल चक्र अपनाने से अनेक प्रकार की समस्याएं उत्पन्न हुई हों जिनके कारण फसल की पैदावार प्रभावित हो रही है। प्रतिकूल मौसम, तना गलन व मरगोज़ा का अत्यधिक प्रकोप, कम लागत के आदानों (जिप्सम, जीवाणु खाद, इत्यादि) के प्रयोग के प्रति किसानों की उदासीनता, उर्वरकों की संतुलित मात्रा तथा सामयिक प्रयोग में कमी, पैदावार को प्रभावित करने के प्रमुख कारण हैं। पैदावार में निरन्तरता बनाये रखने व अधिक पैदावार के लिये इन समस्याओं के समाधान हेतु सुझाई तकनीकों को अपनाना अत्यन्त आवश्यक है। उपर्युक्त समस्याओं के समाधान तथा फसल उत्पादन की अन्य क्रियाओं हेतु कारगर तकनीक उपलब्ध हैं। ज़रूरत है किसानों द्वारा अपनाने की। इस लेख में राया उत्पादन की उन्नत कृषि क्रियाओं का विवरण दिया जा रहा है ताकि किसान इन्हें अपनाकर फसल की अच्छी पैदावार ले सकें।

उन्नत किस्मों की बिजाई : राया की अधिक पैदावार के लिये किसानों को चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय द्वारा विकसित उन्नत किस्मों की बिजाई करनी चाहिये। किस्म का चयन करते समय खेत की मिट्टी, सिंचाई जल की उपलब्धता, बिजाई का समय इत्यादि तथ्यों को ध्यान में रखें। सिफारिश की गई उन्नत किस्मों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है।

आर एच 30 : यह किस्म सभी परिस्थितियों (बारानी, सिंचित, पछेती बिजाई इत्यादि) के लिये एक उत्तम किस्म है। इसका बीज मोटा होता है। पकने पर इस फसल की फलियां नहीं झड़तीं। यह किस्म 135-140 दिन में पकती है तथा इसकी औसत पैदावार 09-10 क्विंटल प्रति एकड़ है।

टी 59 (वरुणा): यह किस्म भी प्रदेश की सभी परिस्थितियों के लिये एक उपयुक्त किस्म है। इसका बीज मोटा होता है। इसकी औसत पैदावर 08-10 क्विंटल प्रति एकड़ है। पकने में यह किस्म 142-145 दिन का समय लेती है।

आर एच 8812 (लक्ष्मी) : इस किस्म की सिफारिश राज्य के सिंचित क्षेत्रों में समय पर बिजाई के लिये सिफारिश की गई है। इसकी फलियां मोटी, बीज मोटे तथा काले रंग के होते हैं। यह किस्म 142-145 दिन में पकती है। इसकी औसत पैदावर 09-10 क्विंटल प्रति एकड़ है।

आर एच 9304 (वसुन्धरा) : इस किस्म की सिफारिश प्रदेश के सिंचित क्षेत्रों में समय पर बिजाई के लिये की गई है। यह पकने में 130-135 दिन का सम्य लेती है। पकने के समय इसकी फलियां झड़ती नहीं हैं तथा औसत पैदावर 10.5 क्विंटल प्रति एकड़ है। यह किस्म पाला तथा तापमान के प्रति सहनशील है।

आर एच 9801 (स्वर्ण ज्योति) : इस किस्म की सिफारिश प्रदेश के सिंचित क्षेत्रों में पछेती बिजाई के लिये की गई है। यह किस्म 130-140 दिन में पक जाती है तथा पकने के समय इसकी फलियां नहीं झड़तीं। यह किस्म पछेती बिजाई में अन्य किस्मों से अधिक पैदावार देती है। इसकी औसत उपज 7-8 क्विंटल है।

आर बी 50 : इस किस्म की प्रदेश के बारानी क्षेत्रों में बिजाई के लिए सिफारिश की गई है। इसकी फलियां लम्बी व मोटी होती हैं। यह पकने में 146 दिन लेती है तथा बारानी क्षेत्रों में इसकी औसत पैदावर 7.2 क्विंटल प्रति एकड़ है।

आर एच 406 : इस किस्म की सिफारिश प्रदेश के बारानी क्षेत्रों में समय पर बिजाई के लिये की गई है। यह पकने में 142-145 दिन का समय लेती है। इस किस्म के दाने मोटे होते हैं। इसकी औसत उपज 8.5-9.5 क्विंटल प्रति एकड़ है। यह किस्म सिंचित अवस्था में भी अच्छी पैदावार देती है।

आर एच 0749 : इस किस्म की प्रदेश के सिंचित क्षेत्रों में समय की बिजाई के लिये सिफरिश की गई है। इसकी फलियां लम्बी, मोटी तथा बीज मोटे होते हैं। इसकी औसत उपज 10-11 क्विंटल प्रति एकड़ है।

बिजाई का समय

राया की बिजाई के लिये 30 सितम्बर से 20 अक्तूबर का उपयुक्त समय रहता है। बिजाई के समय दिन का अधिकतम तापमान 280 सैल्सियस से अधिक नहीं होना चाहिये।

बीज की मात्रा

सिंचित अवस्था में एक एकड़ की बिजाई के लिये 1 कि.ग्रा. 250 ग्राम बीज की आवश्यकता होती है। बारानी हालत में 2 कि.ग्रा. बीज प्रति एकड़ ज़मीन में नमी के अनुसार प्रयोग करना चाहिये।

बिजाई का तरीका

फसल की कतारों में 30 सैं.मी. के फासले पर 4-5 सैं.मी. गहरी बिजाई करें। बिजाई के तीन सप्ताह बाद पौधे से पौधे की दूरी 10-15 सैं.मी. रखकर पौधों की छंटनी करें।

खाद एवं उर्वरक

फसल की अच्छी पैदावर के लिये खादों का संतुलित उपयोग अति आवश्यक है। सिंचित फसल में 32 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (160 कि.ग्रा. अमोनियम सल्फेट या 128 कि.ग्रा. किसान खाद या 70 कि.ग्रा. यूरिया), 12 कि.ग्रा. फास्फोरस (75 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट या 25 कि.ग्रा. डी.ए.पी.), 8 कि.ग्रा. पोटाश (14 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश) प्रति एकड़ की आवश्यकता होती है। फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा तथा नाइट्रोजन की आधी मात्रा बिजाई से पहले डालें और शेष नाइट्रोजन की मात्रा पहले पानी के साथ डालें। फास्फोरस तथा गंधक की मात्रा पूरी करने के लिये सिंगल सुपर फास्फेट का प्रयोग करें क्योंकि इसमें फास्फोरस के अतिरिक्त 12 प्रतिशत गंधक होती है। यदि फास्फोरस की पूर्ति के लिये डी.ए.पी. का प्रयोग करना है तो उसमें 100 कि.ग्रा. जिप्सम प्रति एकड़ बिजाई से पहले ही जुताई के समय डालें। असिंचित फसल में 16 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (80 कि.ग्रा. अमोनियम सल्फेट या 64 कि.ग्रा. किसान खाद या 35 कि.ग्रा. यूरिया), 08 कि.ग्रा. फास्फोरस (50 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट या 17 कि.ग्रा. डी.ए.पी) प्रति एकड़ बिजाई से पहले पोर करें। इसके अतिरिक्त बीज उपचार एजोटीका तथा फास्फोटीका से करें।

सिंचाई

राया में दो सिंचाइयों, एक फूल निकलने के समय और दूसरी फलियां लगते समय, की आवश्यकता होती है। यदि पानी कम मात्रा में उपलब्ध हो तो एक सिंचाई फूल आने के समय देनी चाहिये।

खरपतवार नियन्त्रण

विभिन्न प्रकार के खरपतवारों की रोकथाम के लिये एक गोड़ाई तीन सप्ताह तथा दूसरी गोडाई पांच सप्ताह बाद करें। राया उत्पादन क्षेत्रों की रेतीली भूमि में मरगोज़ा (परजीवी खरपतवार) का प्रकोप काफी होता है जिससे पैदावार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इसकी रोकथाम के लिये राऊंड अप/ग्लाईसेल (ग्लाइफोसेट 41% एस.एल.) की 25 मि.ली. प्रति एकड़ बिजाई के 25-30 दिन व 50 मि.ली. मात्रा प्रति एकड़ बिजाई के 50 दिन बाद 150 लीटर पाने में मिलाकर छिड़काव करें। छिड़काव के समय या बाद में खेत में नमी का होना ज़रूरी है। फसल को नुकसान से बचाने के लिये खरपतवारनाशक की सही मात्रा का प्रयोग करें तथा दोबारा छिड़काव न करें। ◆

फल-फूल गिरना एवं फटना : समस्या एवं समाधान

✍ रणबीर सिंह सैनी, सुरेन्द्र सिंह[1] एवं मुकेश कुमार[2]
कृषि विज्ञान केन्द्र, मण्डकौला
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

फल-फूल गिरने की समस्या अनेक फलों में पायी जाती है जैसे नींबू, मौसमी, सन्तरा, बेर, बेल, आम, अनार, लीची इत्यादि, जिसके फलस्वरूप उत्पादन में कमी के कारण बागवानों को काफी आर्थिक हानि का सामना करना पड़ता है। इसी प्रकार फल फटने को समस्या भी अनेक फलों में पायी जाती है जैसे नींबू, बेर, अनार, बेलपत्थर, लीची, अमरूद आदि। फटे हुए फल बिक्री योग्य नहीं रहते व बाग से आय में गिरावट होती है। इन समस्याओं के निदान हेतु बागवानों को निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना चाहिए।

फल-फूल गिरना

आमतौर पर फल-फूल गिरने के निम्नलिखित मुख्य कारण होते हैं :

किस्में : फलों की कुछ किस्मों में अन्य किस्मों की तुलना में फूल-फल गिरने की समस्या अधिक पाई जाती है जैसे अंगूर की ब्यूटी सीडलैस, पूसा सीडलैस तथा गोल्ड किस्में। इन किस्मों में अर्द्धखिली कली, फूल व दानों का झड़ना आम बात है। इसी प्रकार अन्य फलों की किस्मों में भी इसी प्रकार का अन्तर पाया जाता है।

भ्रूणपात : यह समस्या कई फलों में देखी गई है। परागण व निषेचन के बाद भ्रूण पात हो जाता है और भ्रूणपात के कारण फल गिरने लगते हैं। यह समस्या आमतौर पर अपूर्ण परागण तथा निषेचन होने के कारण आती है। भ्रूणपात सेब, आलुबुखारा, आम आदि में आमतौर पर पाया जाता है।

जलवायु : फल गिरने की समस्या का जलवायु के साथ सीधा तथा अति महत्वपूर्ण सम्बंध है। जलवायु में तापमान, आर्द्रता तथा हवा की गति इस संदर्भ में अहम् भूमिका निभाती है। अत्यधिक तापमान होने की अवस्था में (विशेषकर दिन के समय) छोटे पत्तों, फूलों व छोटे फलों से वाष्पीकरण की गति तेज़ हो जाती है और काफी मात्रा में फूलों का पानी वाष्प बनकर उड़ जाता है और इस प्रकार फूल-फल झड़ने लगते हैं। इसी स्थिति में फल फटने की समस्या भी बढ़ जाती है और फटे हुए फल बाद में गिर जाते हैं। हवा की तेज़ गति(आंधी-तूफान) भी फूल-फल गिरने की समस्या को बढ़ावा देती है।

मिट्टी में नमी की कमी : अत्यधिक तापमान (विशेषकर ग्रीष्म काल में) होने पर वाष्पीकरण व वाष्पोत्सर्जन (ट्रांसपीरेशन) दर भी बढ़ जाती है और मिट्टी में नमी की कमी हो जाती है। इस प्रकार फूल-फलों को आवश्यकतानुसार नमी/पानी नहीं मिलता और फल झड़ने लगते हैं। यह पाया गया है कि समय-समय पर आवश्यकतानुसार सिंचाई देने से फल-फूल गिरने की समस्या काफी हद तक कम हो जाती है। फूल आने के समय सिंचाई नहीं करनी चाहिए बल्कि इससे कुछ पहले सिंचाई करनी चाहिए। फूल आने के समय मिट्टी में नमी की कमी भी नहीं होनी चाहिए। फल बनने के बाद मिट्टी में निरन्तर नमी बनी रहनी चाहिए।

पोषक तत्वों की कमी : पौधों के लिए सन्तुलित मात्रा में पोषक तत्व उपलब्ध होना अति आवश्यक है विशेषकर फल बनने के बाद व फलों की बढ़वार के समय पोषक तत्वों की पौधों को अधिक आवश्यकता होती है क्योंकि फलों व पत्तों में पोषक तत्वों के लिए स्पर्धा होती है। इसलिए जिन फलों को पोषक तत्व पूरी मात्रा में नहीं मिलते उनकी बढ़वार रुक जाती है और वे गिर जाते हैं। फल लगने के बाद पोषक तत्वों की कमी के लक्षण नज़र आने पर शीघ्र पूर्ति के लिए छिड़काव करना चाहिए। इसके अतिरिक्त सन्तुलित पोषण के लिए निर्धारित समय पर उपयुक्त मात्रा में खाद व उर्वरक देने चाहिएं।

बीज व फल गिरने का संबंध : अनेक फलों में यह पाया गया है कि फलों में उपस्थित बीज फलों को वांछित मात्रा में न्यासर्ग/पौधवृद्धि नियामक (हारमोन) विशेष तौर पर ऑक्सीजन व जिब्रैलिक उपलब्ध कराते हैं जो कि फलों की बढ़वार के लिए अति आवश्यक होते हैं। ऐसा न होने की अवस्था में छोटे बीज वाले तथा बीजरहित फलों की बढवार रुक जाती है तथा वो गिर जाते हैं।

अत्यधिक फलन : अनेक फलदार पौधों में अत्यधिक फल लगने की अवस्था में फल झड़ने की समस्या अधिक होती है। अत: पौधों पर अत्यधिक फलन की अवस्था में फल विरलन(थिनिंग) करना आवश्यक हो जाता है।

कीट एवं बीमारियाँ : अनेक प्रकार के कीट एवं बीमारियाँ पत्तें, फूल एवं फलों को नुकसान पहुंचाते हैं और पौधों के ओजस्व(ताकत) को कम करते हैं। फल मक्खी तथा फलछेदक जैसे कीट तथा सफेद चूर्णी व भूरे धब्बे वाले रोग आदि फलों पर आक्रमण करते हैं। इस प्रकार के फल या तो गिर जाते हैं या फिर उपयोग अथवा बिक्री योग्य नहीं रहते।

तालिका : विभिन्न फलों में फल-फूल गिरने की समस्या को रोकने के उपाय

फल	रोकथाम के उपाय
नींबूवर्गीय फल	10 पी.पी.एम. 2,4-डी + 0.5% ज़िंक सल्फेट +20 पी.पी.एम. आरियोफंजीन या बाविस्टीन का पहला छिड़काव जून-जुलाई व दूसरा सितम्बर के दूसरे सप्ताह मे करें। इसके लिए प्रति एकड़ 6 ग्राम 2,4-डी, 3 किलोग्राम ज़िंक सल्फेट, 1.5 किलोग्राम चूना, 12 ग्राम आरियोफंजिन या बाविस्टीन को 550 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।
अंगूर	फूल खिलने से पूर्व मुख्य तने से 0.5 सैं.मी. चौड़ाई का छल्ला उतारें, बेल पर ज़्यादा गुच्छे न रखें, नत्रजन वाली खाद का कम इस्तेमाल करें। फूल आने पर सिंचाई न लगाएं।
आम	फल बनने के बाद (अप्रैल में) 2 प्रतिशत यूरिया का छिड़काव करें। जिन किस्मों के फल तुड़ाई से कुछ पहले गिरते हैं उन पर 20 पी.पी.एम. 2,4-डी (20 मिलीग्राम 2, 4-डी प्रति लीटर पानी) का छिड़काव अप्रैल के अन्त या मई के आरम्भ में करें।
बेर	1.5-2.0 प्रतिशत यूरिया का छिड़काव फल बनने के बाद करें।
आंवला	0.1% बोरैक्स तथा 0.4% ज़िंक सल्फेट का छिड़काव करें।
जामुन	जिब्रैलिक अम्ल 50-100 पी.पी.एम. (एक या दो बार आवश्यकता अनुसार) फूल आने व उसके 15 दिन बाद छिड़काव करें।
लीची	एन.ए.ए. (प्लानोफिक्स) 10 पी.पी.एम.+2,4-डी 15 पी.पी.एम. +1.0 प्रतिशत यूरिया का छिड़काव करें।

फल फटना

फल फटना अनेक फलों में एक गंभीर समस्या है। फटे हुए फलों का मण्डी में बहुत कम भाव मिलता है और बागवानों को काफी आर्थिक नुकसान होता है। फल फटने की समस्या अनार, लीची, बेल, बेर, आम, नींबू वर्गीय फल आदि में पायी जाती है। फल फटने के कई कारण हो सकते हैं जैसे : 1. पौधों में पौष्टिक तत्वों विशेषकर बोरोन की कमी होना; 2.अत्यधिक तापमान तथा सापेक्ष आर्द्रता का कम होना; 3. मिट्टी में जीवांश की कमी होना; 4. लम्बे सूखे अन्तराल के बाद सिंचाई विशेषकर गहरी सिंचाई देना या वर्षा होना।

फल फटने की रोकथाम : जिन पौष्टिक तत्वों की कमी हो उसका तथा बोरैक्स 0.3 से 0.6 प्रतिशत (फलवृक्ष की आवश्कता अनुसार) का छिड़काव करें; पौधों को भरपूर मात्रा में जैविक (देशी खाद) खाद दें; लम्बे अन्तराल पर गहरी सिंचाई की बजाय जल्दी-जल्दी हल्की सिंचाई देनी चाहिए; रोधक/फल फटने की समस्या से मुक्त किस्में लगायें; 2,4,5-टी या एन.ए.ए. 35-50 पी.पी.एम.(35-50 मिलीग्राम प्रति लीटर पानी) का छिड़काव भी काफी हद तक अनेक फलों में समस्या को नियंत्रित करता है। ◆

[1]सहायक निदेशक (बागवानी), ए.डी.टी. कार्यालय, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार
[2]सहायक वैज्ञानिक(बागवानी), क्षेत्रीय अनुसन्धान केन्द्र, बावल

मौसम से संबन्धित जनश्रुतियों के आधार पर – मौसम का अनुमान

✍ **ममता, प्रद्युमन भटनागर एवं जे. एन. भाटिया**
कृषि विज्ञान केंद्र, कुरुक्षेत्र
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

बहुत समय पहले जब मौसम का पूर्वानुमान करने के लिए किसी प्रौद्योगिकी का कोई अस्तित्व नहीं था, तब मौसम का पूर्वानुमान करने के लिए लोग अवलोकनों (observations), पैटर्नों और लोककथाओं पर भरोसा करते थे। एक बार अगर आप इन तरीकों का अभ्यास कर लें तो आप विश्वास के साथ मौसम का पूर्वानुमान लगा सकते हैं।

बादलों को परखें : अगर आप इस बात पर ध्यान दें कि आकाश में किस तरह के बादल हैं और वो किस दिशा में बढ़ रहे हैं, तो ये पता लगाया जा सकता है कि आगे का मौसम कैसा रहने वाला है, सामान्यत: उजले, ऊंचे बादल अच्छे मौसम का संकेत देते हैं जबकि गहरे रंग के, कम ऊंचाई पर स्थित बादल बारिश और आंधी के आने का संकेत देते हैं।

सुबह-सुबह अगर काले बादल दिखें और समय के साथ, अगर वो और बढ़ने लगें तो इसका मतलब है कि जल्द ही वर्षा होने की संभावना है।

सिरस बादल (Cirrus clouds) : आसमान में काफी ऊंचाई पर लंबे स्टीमरों की तरह दिखाई देते हैं, और जब ये दिखें तो समझिये कि अगले 36 घंटों में मौसम बदलने वाला है। आल्टोक्युमुलस बादल अगले 36 घंटों में मौसम बदलने की सूचना देते हैं। निम्बोस्ट्रेट्स क्लाउड्स आसमान में काफी नीचे होते हैं और उनमें भार होने के कारण भारी होते हैं, और ये इस बात का संकेत है कि बारिश हो सकती है।

अगर सर्दी की किसी रात में बादल घिर आयें तो इसका मतलब है कि आप थोड़े गर्म मौसम की उम्मीद कर सकते हैं।

आकाश का रंग : अगर सूर्यास्त के समय आपको लाल आसमान नज़र आये (जब आप पश्चिम की तरफ देख रहे हों), तो इससे ये पता चलता है कि सूखी हवा के साथ हाई प्रेशर सिस्टम बना हुआ है जो धूल कणों को हवा में मिला रहा है जिससे आसमान लाल रंग का दिख रहा है। चूंकि फैलते हुए फ्रंट मूवमेंट और जेट स्ट्रीम सामान्यतया पश्चिम से पूरब की दिशा में बढ़ते हैं, इससे ये पता लगाया जा सकता है कि शुष्क हवा आपकी तरफ बढ़ रही है। यह नज़ारा उच्च दाब और पश्चिम दिशा से आती हवाओं के साथ अच्छे मौसम का संकेत है।

सुबह-सुबह लाल आसमान (पूरब की तरफ जहां से सूरज उदय होता है) से ये पता चलता है कि शुष्क हवा आपके नज़दीक से पहले ही गुज़र चुकी है, और इसके पीछे जो है (आपकी तरफ बढ़ता हुआ) वो एक लो प्रेशर सिस्टम है मतलब – बारिश।

चांद को निहारें : लाल या पीले रंग का चांद दिखाई दे तो इसका मतलब है हवा में काफी धूल मौजूद है। लेकिन अगर चांद काफी चमक रहा हो और साफ दिखाई दे रहा हो तो इसका मतलब है कि लो प्रेशर ने धूल को साफ कर दिया है, और लो प्रेशर का मतलब है – बारिश। चांद के आसपास घेरा या वलय होने पर यह सूचना मिलती है कि बारिश शायद तीन दिनों के अंदर हो सकती है क्योंकि जब चांद के चारों ओर वलय दिखाई देते हैं तो इसका मतलब है कि चांद की रोशनी हिम रवों से बने पतले पक्षाभ बादलों से होकर गुज़र रही है। यदि पक्षाभ बादल कम दाब के समय दिखाई दें तो समझ जाना चाहिए कि ये बारिश वाले बादल हैं। इस कहावत को याद करें : सर्किल अराउंड द मून, रेन और स्नो सून।

पवन (wind) की दिशा का पता लगाइये : अगर आप पवन की दिशा का तुरंत पता लगा सकने में असमर्थ हैं तो आप मुंह में उंगली डालकर कुछ सेकंड के बाद बहार निकालें और देखें कि जिस दिशा से उंगली सूख गई है उसी दिशा में हवा बह रही है। पूरब की दिशा की हवाएं जो पूरब से बहती हैं, जल्दी ही किसी स्टॉर्मफ्रंट से सामना होने का संकेत देती हैं। लेकिन अगर पश्चिम दिशा की हवाएं हों तो ये अच्छे मौसम का प्रतीक हैं।

वायुमंडल की स्थिति : जब घास पर ओस की बूंद हो, तब बारिश नहीं होने वाली है। जब सुबह घास सूखी हो, तब रात के पहले बारिश हो सकती है। इसका कारण है कि उच्च दाब का निर्माण करने वाली शुष्क हवा वसंत या शीतऋतु की रातों को तेज़ी से ठंडा करती है, जिससे सुबह के समय ओस बनती है। लेकिन आर्द्र हवा कुछ ही ऊपर उठने और निम्न दाब के क्षेत्र का निर्माण करने के कारण सुबह के समय ओस को बनने से रोकती है। सामान्यत: निम्न दाब का क्षेत्र बारिश लाता है। चींटियों के अपने बिल के एक ओर से अपने अंडे ऊंची भूमि पर ले जाने की घटना बारिश होने का संकेत है। वास्तव में हम चींटियों की हलचल देखकर बारिश की भविष्यवाणी कर सकते हैं। बारिश के पहले बिल छोड़कर अपने अंडों को सुरक्षित ऊंचे स्थानों पर ले जाती चींटियों की कतार बारिश होने का संकेत है। ◆

आवश्यक सूचना

चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार स्थित किसान सेवा केन्द्र में किसानों हेतु सप्ताह में तीन दिन सोमवार, बुधवार एवं शुक्रवार को 10 से 12 बजे तक नि:शुल्क फोन सुविधा (हैल्प लाइन) फोन नं. 1800-180-3001 पर उपलब्ध है जिसमें वैज्ञानिकों से कृषि-संबंधी परामर्श किया जा सकता है। यदि किसी जगह से यह फोन सुविधा उपलब्ध नहीं हो तो किसान भाई 01662-232768 पर सशुल्क फोन करके उपर्युक्त दिनों में इस सुविधा का लाभ उठा सकते हैं।

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, बावल में भी सोमवार, बुधवार, शुक्रवार 10 से 12 बजे तक फोन नं. 1800-180-4002 पर यह नि:शुल्क फोन सुविधा उपलब्ध है।

क्षेत्रीय अनुसंधान केन्द्र, ऊचानी (करनाल) में भी मंगलवार व बृहस्पतिवार 10 से 11 बजे तक फोन नं. 1800-180-3111 पर यह नि:शुल्क फोन सुविधा उपलब्ध है।

खेत में फसल अवशेष विघटन के लाभ

✍ सोनिया रानी, मनोज कुमार शर्मा एवं प्रीति यादव[1]
मृदा विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

भारत एक कृषि अर्थव्यवस्था है। यहां खेती के लिए भूमि का एक विशाल बहुमत उपयोग किया जाता है और विभिन्न कृषि-पारिस्थितिक क्षेत्रों में फसलों की एक विस्तृत श्रृंखला में खेती की जाती है। इस खेती से, भारत में लगभग 500 मिलियन टन फसल अवशेष हर साल उत्पन्न होते हैं। अवशेषों का एक बड़ा हिस्सा मुख्य रूप से आगामी फसल की बुवाई के लिए खेत को साफ़ करने के लिए खेत में जला दिया जाता है। हाल ही के वर्षों में मानव श्रम की कमी, परंपरागत तरीकों से फसल अवशेषों को हटाने और फसलों की कटाई के लिए संयोजन के उपयोग के कारण फसल अवशेषों के खेत में जलने की समस्या तेज़ी से प्रकट हुई है। इन फसल अवशेषों का खेत में प्रबंधन करने से न केवल पर्यावरण अपितु हमारी मृदा स्वास्थ्य में सकारात्मक परिणाम देखने को मिलते हैं। यही कारण है कि हमें अवशेषों का खेत में विघटन/अपघटन करना चाहिए।

छोटी मात्रा में मौजूद होने के बावजूद कार्बनिक पदार्थ मिट्टी के भौतिक और रासायनिक गुणों को प्रभावित करते हैं। इसके अलावा, ऑर्गेनिक पदार्थ अधिकांश सूक्ष्मजीवों के लिए ऊर्जा और शरीर के निर्माण के लिए आवश्यक घटकों की आपूर्ति करता है। मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ का मूल स्रोत फसल के अवशेष हैं। प्राकृतिक परिस्थितियों में पेड़, घास और अन्य पौधों के शीर्ष और जड़ों से बड़ी मात्रा में कार्बनिक अवशेषों की आपूर्ति होती है। कटाई वाली फसलों के साथ-साथ पौधे के दसवें से एक तिहाई हिस्से आमतौर पर मिट्टी की सतह पर गिरते हैं और मिट्टी में रहते हैं, इनके अलावा पौधों की जड़ें जो मिट्टी में रह जाती हैं, वह कार्बन का अच्छा स्रोत हैं। चूंकि इन कार्बनिक सामग्रियों को मिट्टी के जीव विघटित और पचा जाते हैं, वे मिट्टी की वास्तविक व भौतिक अव्यवस्था को बनाए रखते हैं। तदनुसार, उच्च फसल के अवशेष मिट्टी के जीवों को खाना प्रदान करते हैं, जो बदले में स्थिर पदार्थ/घटक को बनाते हैं जो मिट्टी के कार्बनिक स्तर को बनाए रखने में मदद करते हैं।

फसल अवशेषों में नमी की मात्रा अधिक होती है, जो 60 से 90 प्रतिशत तक होती है। वज़न के आधार पर, शुष्क पदार्थों में ज़्यादातर कार्बन और ऑक्सीजन होता है, जिसमें 10 प्रतिशत से कम हाइड्रोजन और अकार्बनिक तत्व (राख) होते हैं। ये तीन तत्व मिट्टी के कार्बनिक स्रोत के बड़े पैमाने पर हावी हैं। हालांकि अन्य तत्व केवल छोटी मात्रा में मौजूद हैं, फिर भी वे पौधे के पोषण में और सूक्ष्मजीवों के शरीर की आवश्यकताओं को पूरा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटेशियम, कैल्शियम, सल्फर और मैग्नीशियम जैसे आवश्यक तत्व विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं।

सभी कार्बनिक स्रोत (शर्करा, प्रोटीस, सेलूलोज़, वसा, लिग्निन्स इत्यादि) आमतौर पर मिट्टी में पौधों के तुरंत तोड़े जाने पर एक साथ विघटित होने लगते हैं। चीनी और सरल प्रोटीस अधिक आसानी से विघटित होते हैं और लिग्निन अपघटन के लिए सबसे प्रतिरोधी होते हैं। विघटन के लिए, कई जैविक और रासायनिक प्रक्रियाएं होती हैं जो पर्यावरण और मिट्टी की स्थितियों जैसे हवा और मिट्टी के तापमान, मिट्टी की नमी, पीएच, ऑक्सीजन स्तर और मिट्टी के माइक्रोबियल समुदाय से प्रभावित होती हैं। यह विघटन चक्र एक जटिल प्रक्रिया है जो अवशेष के प्रकार के आधार पर अलग-अलग समय लेता है।

फसल अवशेष अपघटन में नाइट्रोजन मिनरलाईज़ेशन और ईमोबलाईज़ेशन की प्रक्रिया शामिल हैं, ये दोनों प्रक्रिया मिट्टी के सूक्ष्मजीव को शामिल करती हैं। अपघटन के दौरान, मिट्टी के सूक्ष्मजीव फसल अवशेष के कार्बन (सी) पर आश्रित रहते हैं और इस प्रक्रिया के लिए नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है तथा फसल अवशेषों के कारण खेत में कार्बन और नाइट्रोजन अनुपात बढ़ता है। ईमोबलाईज़ेशन तब होता है जब नाइट्रोजन मिट्टी के सूक्ष्मजीवों द्वारा खाया जाता है और पौधों के लिए उपलब्ध नहीं होता। नाइट्रोजन मिनरलाईज़ेशन प्रक्रिया मिट्टी के सूक्ष्मजीवों के कारण तब होती है, जब वह खनिज कार्बनिक से अकार्बनिक स्रोतों का विमोचन करते हैं।

मृदा सूक्ष्मजीव फसल अवशेष में मौजूदा कार्बन पर आश्रित हैं और विघटन प्रक्रिया के लिए नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है। नाइट्रोजन की तुलना में कार्बन की उच्च सघनता के परिणामस्वरूप मिट्टी के सूक्ष्म जीवों को कार्बनिक पदार्थ को तोड़ने और मिट्टी में मौजूद अधिक नाइट्रोजन का उपयोग करने के लिए लंबा समय लगता है। इसे सी:एन अनुपात कहते हैं। यह अनुपात प्राप्त नत्रजन की मात्रा फसल को मिलने में महत्तवपूर्ण भूमिका निभाता है। किसी भी अवशेष या भूमि की सी:एन अनुपात 10:1 के आसपास आदर्श मानी जाती है। परंतु यदि यह अनुपात ज़्यादा हो तो मृदा के अंदर परिवर्तन होता है। यदि हम गेहूं का भूसा मिट्टी में दबाएं जिसकी सी:एन अनुपात 80:1 होती है जिसके कारण सूक्ष्मजीव क्रियाशील हो जाते हैं तथा तेज़ी से बढते हैं, उसी प्रकार से धान का सी:एन अनुपात 65:1 होता है। ये ज़्यादा मात्रा में कार्बन डाईऑक्साईड पैदा करते हैं, परंतु ये नाइट्रेट नत्रजन को भोजन के रूप में प्रयोग करते हैं जोकि फसल को लेनी होती है। इससे मृदा में नत्रजन की कमी आ जाती है और कमी के लक्षण पत्तियों पर प्रकट होने लगते हैं। साथ ही नत्रजन की कमी के विघटन की क्रिया भी धीमी हो जाती है। इसलिए बुवाई के समय यूरिया डालने से न केवल विघटन प्रक्रिया में तेज़ी आती है अपितु फसल में नत्रजन की कमी भी नहीं आती।

मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ में सी/एन अनुपात दो प्रमुख कारणों से महत्वपूर्ण है :

- मिट्टी में उपलब्ध नाइट्रोजन के लिए सूक्ष्मजीवों के बीच प्रतिस्पर्धा रखना तब देखा जाता है जब उच्च सी/एन अनुपात वाले अवशेष मिट्टी में मिलाए जाते हैं।
- सी/एन अनुपात मिट्टी में स्थिर कार्बन के रखरखाव के लिए आवश्यक है, अत: मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ मिट्टी में उपलब्ध नाइट्रोजन स्तर को बाधित करते हैं।

सी/एन अनुपात का महत्व व्यावहारिक उदाहरण से समझा जा सकता है: मान लें कि सशक्त नाइट्रिफिकेशन की स्थिति के दौरान खेत की मिट्टी की जांच की जाती है। नाइट्रेट मध्यम मात्रा में मौजूद हैं, और सी/एन अनुपात अपेक्षाकृत कम है। अब मान लीजिए कि एक उच्च सी/एन अनुपात (50:1) के साथ कार्बनिक अवशेषों की बड़ी मात्रा मिट्टी में अपघटन का समर्थन करने वाली स्थितियों के तहत शामिल की जाती है, तथा एक बदलाव की संभावना होती है। सूक्ष्मजीव-बैक्टीरिया, कवक और एक्टिनोमाइसिट्स सक्रिय हो जाते हैं और बड़ी मात्रा में कार्बन डाइऑक्साइड का उत्पादन करते हुए तेज़ी से अपनी संख्या में वृद्धि करते हैं। इन परिस्थितियों में, नाइट्रेट नाइट्रोजन अनिवार्य रूप से मिट्टी से गायब हो जाता है क्योंकि सूक्ष्म जीव अपने शरीर को बनाए रखने के लिए इसकी

(शेष पृष्ठ 20 पर)

[1]कृषि विज्ञान केन्द्र, सिरसा

फरवरी मास के कृषि कार्य

फसलों में

गेहूँ और जौ

यह महीना समय पर बीजी गई गेहूँ की बौनी किस्मों में तीसरा पानी और पछेती किस्मों में दूसरा पानी लगाने का है। यदि नाइट्रोजन वाली खाद की कोई मात्रा शेष रह गई हो तो इसी पानी के साथ डाल दें व खाद डालने के बाद गोड़ी अवश्य करें। हल्की ज़मीन में खाद सिंचाई के बाद डालें। इसी प्रकार जौ की फसल में भी दूसरा पानी तथा नाइट्रोजन की बची आधी मात्रा भी डालें।

तापमान में गिरावट आने, आसमान में लगातार बादल या धुंध छाए रहने के कारण प्राय: गेहूँ की पछेती फसल में जस्ते की कमी के लक्षण दिखाई दे सकते हैं। 25-30 दिन की फसल पर नीचे की दो पत्तियों को छोड़कर अन्य पत्तियों का हरा रंग उड़कर हल्का होना शुरू हो जाता है। फिर पत्तों के मध्य में सफेद या हल्के-पीले रंग के छोटे-छोटे धब्बे बन जाते हैं। जस्ते की लगातार कमी बने रहने पर धब्बे आकार में बड़े हो जाते हैं। अत्यधिक कमी में नई आने वाली पत्तियों तथा मुख्य तनों पर भी, जहाँ पत्तियां मिलती हैं, वहां पर भूरे-पीले धब्बे बन जाते हैं। कई बार पत्ती के बीच का भाग मुख्य सिरे को छोड़कर पूरा सूख जाता है परंतु पत्ती की नोक की ओर का हिस्सा हरा बना रहता है। पत्ती बीच में से मुड़कर नीचे की ओर लटक जाती है। कई बार नई पत्तियां अत्यंत पतली एवं नुकीली दिखाई देती हैं। पौधे की गांठों के बीच की दूरी घट जाती है, बढ़वार कम हो जाती है, फसल में बालें देर से आती हैं तथा बाल में दानों की संख्या कम बनती है। यदि कमी को समय से दूर न किया जाए तो उपज में बहुत गिरावट आ जाती है।

तकनीकी सहायता :

- एच. एस. सहारण, सह-निदेशक (कृषि परामर्श सेवा)
- अश्वनी कुमार, संकाय सलाहकार (बागवानी)
- तरुण वर्मा, ज़िला विस्तार विशेषज्ञ (कीट विज्ञान)
- डी. एस. दुहन, सहायक वैज्ञानिक (सब्जी विज्ञान)
- रोहतास कुमार, सहायक वैज्ञानिक (मृदा विज्ञान)
- राजेश दहिया, सहायक प्राध्यापिका (गृह विज्ञान)
- वी. एस. हुड्डा, ज़िला विस्तार विशेषज्ञ (सस्य विज्ञान)
- देवेन्द्र सिंह बिढान, सहायक प्राध्यापक (पशु उत्पादन प्रबन्धन)
- सूबे सिंह, सहायक निदेशक (विस्तार शिक्षा)

विस्तार शिक्षा निदेशालय, गांधी भवन
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

खड़ी फसल में जस्ते की कमी तुरंत दूर करने के लिए फसल की पत्तियों पर 0.5 प्रतिशत ज़िंक सल्फेट का छिड़काव करें। एक एकड़ फसल पर छिड़कने के लिए मानवचालित पंप से 200 लीटर घोल की आवश्यकता होगी जिसके लिए 1.0 किलोग्राम ज़िंक सल्फेट लगेगा। क्योंकि ज़िंक सल्फेट की तासीर तेज़ाबी होती है, अत: इसे उदासीन करने के लिए 0.25 प्रतिशत चूने का घोल या 2.5 प्रतिशत यूरिया का घोल (200 लीटर पानी के लिए 5 कि.ग्रा. यदि फसल में नाइट्रोजन की भी कमी हो) प्रयोग करना चाहिए। इकट्ठा घोल बनाने से पहले ज़िंक सल्फेट तथा चूना या यूरिया का घोल 9-10 लीटर पानी में अलग-2 बना लेना चाहिए। फिर मलमल के बारीक कपड़े से छानकर दोनों घोलों को मिलाकर घोल की पूरी मात्रा (200 लीटर) बना लें। 15-15 दिन के अंतर पर 2 छिड़काव करें। ओस से भीगी फसल पर, तेज़ हवा चलते समय या शाम के समय छिड़काव न करें। यदि किसी कारणवश छिड़काव से फसल गल जाए तो फसल को पानी लगा दें। यदि ज़मीन में पर्याप्त नमी है तो पानी लगाने की कोई आवश्यकता नहीं। एक सप्ताह में फसल स्वयं ठीक हो जाएगी।

जिन किसान भाइयों के ट्यूबवैल या बोर के पानी में बाइकार्बोनेट है और ज़मीन में कैल्शियम कार्बोनेट भी है, वहां पानी लगाने के बाद फसल में पीलापन भी आ सकता है। ध्यान से देखें कि यदि नीचे की पत्तियां हरी हों तथा नई निकलने वाली पत्तियां पीली धारीदार या पूर्णतया पीली दिखाई दें तो समझें कि यह लोहे की कमी के कारण है। यह समस्या कुछ खेतों या कुछ विशेष किस्मों में अधिक स्पष्ट दिखाई देगी। ज़मीन में पहुंचाये गए पानी में बाइकार्बोनेट की अधिकता के कारण यह समस्या प्रकट हुई है। अत: समस्या के तुरंत समाधान के लिए पहले तो फसल पर 0.5 प्रतिशत फैरस सल्फेट घोल के 8-10 दिन के अंतर पर लगातार 2-3 छिड़काव करें तथा बाइकार्बोनेट को उदासीन करने के लिए पानी की जांच के अनुसार जिप्सम डालें। फैरस सल्फेट बाज़ार में हरा-कसीस के नाम से पंसारी के यहां से मिल जाएगा। खरीदते समय ध्यान दें कि इसका रंग हरा हो। यदि लाल रंग है तो उसे छिड़कने से लाभ नहीं होगा।

यदि चेपा (माहू) का आक्रमण हो जाए तो 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ के हिसाब से छिड़कें।

गेहूँ की फसल में पीले रतुए के लक्षण दिखाई देते ही बचाव के लिए फसल पर 800 ग्राम ज़ाइनेब (डाईथेन या इंडोफिल ज़ेड-78) या मैन्कोज़ेब (डाइथेन या इंडोफिल एम-45) या प्रोपीकोनाज़ोल 200 मि. ली. को 250 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति एकड़ छिड़काव करें और आवश्यकता पड़ने पर 10 या 15 दिन के अंतर पर दोहराएं।

गन्ना

बीज/नौलख बोई जाने वाली फसल के खेतों की मिट्टी का नमूना लेकर तुरंत मिट्टी की जांच करवाएं। प्रथम पखवाड़े में ही 15-20 गाड़ी गोबर की गली-सड़ी खाद पूरे खेत में बिखेरकर भूमि की ऊपरी सतह में जोतकर मिला दें। यदि खाद कम गला-सड़ा हो तो प्रति एकड़ खाद के साथ 20-25 किलोग्राम यूरिया भी बिखेरकर मिला दें। ध्यान रखें कि खेत में गलन-सड़न प्रक्रिया को ठीक तरह से चलाने के लिए पर्याप्त नमी होनी अति आवश्यक है। यदि खेत सूखा हो तो हल्का पानी लगा दें।

गन्ना बीजते समय रासायनिक खादों का प्रयोग मिट्टी की जांच रिपोर्ट के अनुसार करें। यदि जांच करना संभव न हो तो बिजाई के समय प्रति एकड़ 20 किलोग्राम शुद्ध नाइट्रोजन (44 किलोग्राम यूरिया), 20 किलोग्राम शुद्ध फास्फोरस (125 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट या 44 किलोग्राम टी.एस.पी. या डी.ए.पी.) गंडेरियों (पोरियों) के नीचे डालें। यदि ज़मीन में पोटाश तथा जस्ता भी कम हो तो 20 किलोग्राम शुद्ध पोटाश (32 किलोग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश) तथा 10 किलोग्राम ज़िंक सल्फेट भी बिजाई के समय अन्य उर्वरकों के साथ डाल दें। लवणीय तथा क्षारीय ज़मीन में ज़िंक सल्फेट अवश्य डालें।

मोढ़ी फसल में यदि अच्छी फूट आ गई हो तो फरवरी माह में पहली जुताई-गुड़ाई के समय 30 किलोग्राम शुद्ध नाइट्रोजन (66 किलोग्राम यूरिया) प्रति एकड़ डालें। यदि ज़मीन में प्राप्य फास्फोरस कम है और बीजी फसल में फास्फोरस की कमी दिखाई दे तो नाइट्रोजन उर्वरक के साथ 20 किलोग्राम शुद्ध फास्फोरस (125 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट या 44 किलोग्राम डी.ए.पी. या टी.एस.पी.) भी अवश्य डालें।

गन्ने की बिजाई के समय दीमक तथा कनसुआ की रोकथाम के लिए प्रति एकड़ 2.5 लीटर क्लोरपाइरीफॉस 20 ई.सी. या 600 मि.ली. फिप्रोनिल 5 एस.सी. को 600 से 1000 लीटर पानी में फव्वारे द्वारा खूडों में पोरियों के ऊपर डालें तथा खूडों को उपचार के बाद तुरंत सुहागा लगाकर बंद कर दें। इसके अलावा 150 मि.ली. इमिडाक्लोप्रिड (कान्फिडोर 200 एस.एल. या इमिडागोल्ड 200 एस.एल.) को 250-300 लीटर पानी में मिलाकर नैपसैक पंप से खूड्डों में पोरियों पर छिड़काव भी किया जा सकता है। स्केल कीट (शल्क) लगी फसल को काट लें व खेत में बची पत्तियां आदि तुरंत जला दें। इस कीट से ग्रसित क्षेत्र में केवल एक ही मोढ़ी की फसल लें। बीज केवल स्वस्थ फसल से ही लें। बिजाई से पूर्व पोरियों को 0.25 प्रतिशत एमिसान या मैन्कोज़ेब (डाईथेन या इण्डोफिल एम-45) 250 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी के घोल में 4-5 मिनट डुबोकर उपचारित कर लें।

सूरजमुखी

सूरजमुखी की बिजाई 15 फरवरी तक पूरी कर लें। समय पर बिजाई के लिए हरियाणा सूरजमुखी नं. 1 व संकर किस्में के बी एस एच-1, एम एस एफ एच-8, पी ए सी-36, के बी एस एच-44, एच एस एफ एच-848 तथा पी सी एस एच-234, पछेती बिजाई के लिए संकर किस्में एम एस एफ एच-17, पी ए सी-1091, सनजीन-85, प्रोसन-09 तथा एच एस एफ एच-848 किस्मों का बीज प्रयोग करें। उन्नत किस्म का 4 तथा संकर किस्मों का 1.5 से 2 किलोग्राम बीज प्रति एकड़ प्रयोग करें। बिजाई से पहले बीज को 4-6 घंटे तक पानी में भिगोकर छाया में सुखा लें। बीजजनित रोगों से बचाव के लिए फफूंदनाशक से बीज का उपचार करना ज़रूरी है। जड़गलन तथा तनागलन रोगों से बचाव के लिए प्रति किलोग्राम बीज को 3 ग्राम थाईरम से बिजाई से पहले उपचारित करें। बीजोपचार के लिए बाविस्टीन 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज के लिए भी प्रयोग की जा सकती है। उन्नत किस्म में कतारों के बीच की दूरी 45 सैं.मी. तथा पौधों के बीच की दूरी 30 सैं.मी. और संकर किस्मों के लिए कतारों में 60 सैं.मी. एवं पौधों में दूरी 30 सैं.मी. रखें। बीज की गहराई 3-5 सैं.मी. रखें। सूरजमुखी की बिजाई 15 फरवरी तक पूरी कर लें।

उन्नत किस्म एवं सामान्य उपजाऊ अवस्थाओं में संकर किस्मों में 24 किलोग्राम शुद्ध नाइट्रोजन तथा 16 किलोग्राम शुद्ध फास्फोरस प्रति एकड़ के हिसाब से डालें। संकर किस्म (हाइब्रिड) के लिए 40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (90 कि.ग्रा. यूरिया) तथा 20 कि.ग्रा. फास्फोरस (125 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) प्रति एकड़ डालें। हल्की भूमि वाले प्रांतों (दक्षिणी क्षेत्रों) में नाइट्रोजन की मात्रा 32 कि.ग्रा. एवं फास्फोरस की 24 कि.ग्रा. प्रति एकड़ प्रयोग करें। पूरी फास्फोरस व आधी नाइट्रोजन बिजाई के समय डालें।

जनवरी में बीजी गई फसल में पहली सिंचाई, बिजाई के लगभग 30-35 दिन बाद करें। नाइट्रोजन की शेष आधी मात्रा (प्रति एकड़ 12 कि.ग्रा. सामान्य उपजाऊ एवं 16 कि.ग्रा. हल्की भूमि में) प्रथम सिंचाई के समय डालें। जनवरी में बीजी गई फसल में पहली निराई-गुड़ाई भी करें।

कपास

अगर कपास की फसल के बाद खेत खाली रह गया हो तो फरवरी के अंत में हल से गहरी जुताई कर दें। इससे मिट्टी में पड़ी सूण्डियों को पक्षी खा जाएंगे। अगली फसल में गुलाबी व चितकबरी सूण्डियों तथा मीलीबग का आक्रमण कम हो, इसके लिए ज़रूरी है छंटियों के साथ लगे टिंडों को झाड़कर नष्ट कर दें तथा ऐसी छंटियों को जलाने के लिए प्रयोग करें। यदि छंटियां खेत में खड़ी हों तो उनकी गहरी कटाई करें। ध्यान रहे कि मोढ़ी की फसल कभी न लें।

चना

चने पर फली छेदक सूण्डी का आक्रमण कुछ क्षेत्र में हो सकता है। इससे बचने के लिए 200 मि.ली. मोनोक्रोटोफॉस 36 एस.एल. या 400 मि.ली. क्विनलफॉस 25 ई.सी. को 100 लीटर पानी के साथ प्रति एकड़ छिड़कें। इसके अतिरिक्त 80 मि.ली. फेनवालरेट 20 ई.सी. या 50 मि.ली. साईपरमेथ्रिन 25 ई.सी. या 150 मि.ली. डेकामेथ्रिन 2.8 ई.सी. इतने ही पानी में मिलाकर प्रति एकड़ भी कारगर है। इनके स्थान पर 10 किलोग्राम क्विनलफॉस 1.5 डी धूड़ा प्रति एकड़ भी धूड़ा जा सकता है। ज़रूरत पड़ने पर 15 दिन पर कीटनाशक दवा बदल कर फिर छिड़कें।

अंगमारी या झुलसा के आक्रमण से सचेत रहें, विशेषकर यदि मौसम नम व ठंडा रहे और वर्षा के आसार दिखाई दें तो प्रभावित पौधों को उखाड़कर नष्ट कर दें।

सरसों व राया

यदि मौसम अनुकूल हो तो चेपे (अल/माहू) का आक्रमण ज़रूर मिलेगा। फसल को इस कीट से बचाने के लिए 250-400 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. को 250-400 लीटर पानी के साथ प्रति एकड़ फसल पर दोपहर बाद छिड़कें तथा ज़रूरत हो तो 15 दिन बाद फिर दोहराएं। सरसों के पत्तों पर सुरंग बनाने वाला कीट भी इन्हीं कीटनाशकों से मर जाएगा। मधुमक्खियों को बचाने के लिए दोपहर तीन बजे के बाद ही कीटनाशक छिड़कें।

यदि सफेद रतुआ व डाऊनी मिल्ड्यू के लक्षण फसल पर दिखाई दें तो बचाव के लिए 600 ग्राम मैन्कोज़ेब (डाईथेन या इण्डोफिल-एम-45) का 200 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रति एकड़ फसल पर छिड़काव करें। फफूंदनाशकों की नियंत्रण क्षमता बढ़ाने के लिए प्रति 100 लीटर घोल में 10 ग्राम सेल्वेट-99 या 50 मि.ली. ट्राईटान अवश्य मिला लें।

नेपियर (हाथी) घास

नई बीजने वाली फसलों में, खेत की तैयारी करके उसमें प्रति एकड़ लगभग 20 गाड़ी गोबर की खाद या कम्पोस्ट मिलाकर डालें।

बरसीम, रिजका एवं जई

इन फसलों में आवश्यकतानुसार सिंचाई करें तथा सही अवस्था पर चारे की कटाई करते रहें। चारे की कटाई ओस सूखने के बाद करें। फालतू बरसीम एवं रिजका की 'हे' तथा जई की 'साइलेज' बना लें।

नोट : अपने ट्यूबवैल के पानी की जांच करवाएं और भूमि खराब होने से बचाएं।

सब्जियों में

टमाटर

इस मास बसंतकालीन फसल के लिए तैयार खेत में पौधरोपण करें। खेत तैयार करने के लिए, जैसा कि जनवरी माह में बताया गया है, एक एकड़ में 10 टन गोबर की सड़ी खाद, 40 किलोग्राम नाइट्रोजन (88 किलोग्राम यूरिया खाद), 2.5 किलोग्राम फास्फोरस (150 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट) तथा 20 किलोग्राम पोटाश (32 किलोग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश) डालें। गोबर की खाद को आमतौर पर पौधरोपण से लगभग 3 सप्ताह पहले खेत में भली प्रकार बिखराकर मिला लें। पौधरोपण के समय 1/3 नाइट्रोजन तथा फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा दें। पौधरोपण में कतारों में 60 सैं.मी. की दूरी तथा पौधों में 45 से 60 सैं.मी. की दूरी रखें। पौधरोपण के बाद एक हल्की सिंचाई अवश्य करें। पाला की आशंका होने पर रात के समय खेत के आसपास खरपतवार व फूस जलाकर धुआं करें। सफेद मक्खी को मारने के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में प्रति एकड़ 15 दिन के अंतर पर छिड़कते रहें ताकि मरोड़िया रोग न लगे। पौधों को पाला या कोहरे के प्रति प्रतिरोधी बनाने के लिए साईकोसिल दवा का पौधशाला में छिड़काव करें।

बैंगन

बसंतकालीन फसल के लिए खेत की तैयारी करें। तैयारी लगभग टमाटर की ही तरह करें। परंतु खाद की मात्रा में फास्फोरस 20 किलोग्राम (120 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट) व पोटाश 10 किलोग्राम (16 किलोग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश) प्रति एकड़ की दर से दें। पौधरोपण कतारों में 60 सैं.मी. की दूरी पर करें तथा पौधों से पौधों की दूरी 45 सैं.मी. रखें। अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए सिफारिशशुदा किस्में, जैसे कि हिसार प्रगति, हिसार श्यामल या बी आर-112 या एच एल बी-25 या हिसार बहार किस्मों को प्रयोग में लाएं। पौधरोपण के बाद खेत में हल्की सिंचाई देना आवश्यक है।

शरद्कालीन फसल की काट-छांट करके भी फसल ली जा सकती है। ऐसा करने के लिए सभी पालाग्रस्त टहनियों को काट दें तथा खेत में उचित खाद, पानी दें। इससे आप अगेती फसल प्राप्त कर सकते हैं जिससे कि मुख्य फसल की अपेक्षा लाभ अधिक होता है।

मिर्च

बसंतकालीन फसल के लिए मिर्च की पौध की खेत में रोपाई करें। कतारों की दूरी 45 से 60 सैं.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 30 से 45 सैं.मी. रखें। लंबी किस्मों में एन पी 46ए या पूसा ज्वाला, पंत सी-1, हिसार शक्ति या हिसार विजय को प्रयोग में लाएं तथा शिमला मिर्च में कैलिफोर्निया वण्डर नामक किस्म को प्रयोग में लाएं। खेत तैयार करते समय प्रति एकड़ की दर से खाद व उर्वरक का प्रयोग करें-10 टन गोबर की सड़ी खाद, 25 कि.ग्रा. नाइट्रोजन (55 कि.ग्रा. यूरिया खाद), 12 कि.ग्रा. फास्फोरस (72 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फास्फेट) तथा 12 कि.ग्रा. पोटाश (20 कि.ग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश)। पौधरोपण के समय ½ नाइट्रोजन व पूरी फास्फोरस व पोटाश दें। गोबर की खाद को जुताई करते समय, पौधरोपण के लगभग 3 सप्ताह पहले खेत में भली प्रकार बिखराकर जुताई करें।

मटर

फलीछेदक सूण्डी का प्रकोप होने पर 60 मि.ली. सायपरमेथ्रीन 25 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। पत्तियों में सुरंग बनाने वाले कीट से फसल को बचाने के लिए 400 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। ज़रूरत हो तो यही छिड़काव 15 दिन बाद दोहराएं। कीटनाशक के छिड़काव के बाद 3 सप्ताह तक फसल को खाने के काम में न लें। सफेद चूर्णी रोग से बचाव के लिए 500 ग्राम सल्फेक्स या 80 मि.ली. कैराथेन प्रति एकड़ की दर से 200 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

सब्जी का नाम	बीज की मात्रा (प्रति एकड़)	बोने की दूरी		किस्में
		कतारों की	पौधों की	
1	2	3	4	5
लौकी	2 कि.ग्रा.	2 मी.	60 सैं.मी.	पूसा समर प्रोलिफिक (लंबी व गोल),
चप्पन कद्दू	2 कि.ग्रा.	60-90 सैं.मी.	45-60 सैं.मी.	पूसा अलंकार, बीकानेरी ग्रीन, हिसार सिलेक्शन-1, हिसार टिण्डा-10
टिण्डा	2 कि.ग्रा.	125-150 सैं.मी.	45-60 सैं.मी.	हिसार टिण्डा-10
करेला	2 कि.ग्रा.	125-150 सैं.मी.	20-45 सैं.मी.	कोयम्बटूर लौंग, पूसा दो मौसमी
तोरी	2 कि.ग्रा.	180-240 सैं.मी.	45-60 सैं.मी.	पूसा चिकनी, पूसा नसदार
खीरा	1 कि.ग्रा.	150 सैं.मी.	45-60 सैं.मी.	जापानी लौंग ग्रीन
ककड़ी	1 कि.ग्रा.	150 सैं.मी.	60-75 सैं.मी.	लखनऊ अर्ली व करनाल सलेक्शन

फूलगोभी, पत्तागोभी व गांठगोभी

तैयार फसल के फूलों व गांठों को उचित समय पर काट कर बाज़ार भेजें। इस समय अल (माहू/चेपा) व सूण्डियों का आक्रमण होता है। इससे फसल को बचाने के लिए 400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ 10 दिन के अंतर पर छिड़कें। डायमण्ड बैकमॉथ सूण्डी के लिए 400 ग्रा. बैसिलस थूरिन्जिएन्सिस (बायोआस्प) घु.पा. या 300 मि.ली. डायजिनान 20 ई.सी. या 60 मि.ली. डाईक्लोरवास 76 ई.सी. का छिड़काव भी कर सकते हैं। कटाई से एक सप्ताह पहले कीटनाशक का छिड़काव बंद कर दें।

प्याज़ व लहसुन

इन फसलों की आवश्यकतानुसार सिंचाई, निराई-गुड़ाई करें। नाइट्रोजन उर्वरक की एक तिहाई मात्रा दें। खेत में नमी की कमी न होने दें क्योंकि इससे गांठों की बढ़वार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। चूरड़ा (थ्रिप्स) हल्के भूरे अथवा पीले रंग का बारीक-सा कीट पत्तियों का रस चूस कर पौधों को कमज़ोर कर देता है जिससे पत्तों का ऊपरी भाग सूख जाता है। अधिक आक्रमण होने पर पत्ते सफेद, भूरे पडने लगते हैं। इसकी रोकथाम के लिए 300 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. या 60 मि.ली. साइपरमेथ्रिन 25 ई.सी. या 75 मि.ली. फेनवेलरेट 20 ई.सी. या 175 मि. ली. डेल्टामेथ्रिन 2.8 ई.सी. को 200-250 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें।

बैंगनी धब्बे वाले रोग से बचाने हेतु, विशेषकर प्याज़ की बीज वाली फसल में इस माह के दूसरे पखवाड़े में 400 ग्राम मैन्कोज़ेब (डाईथेन या इण्डोफिल एम-45) को 200 लीटर पानी में घोल कर प्रति एकड़ छिड़काव करें। इसी घोल में 20 ग्राम सेल्वेट भी मिला लें।

मूली व गाजर

इन फसलों की तैयार जड़ों की खुदाई करें तथा उन्हें साफ करके बाज़ार भेजें। जड़ों को ज़मीन में कड़ी न होने दें व आवश्यकतानुसार सिंचाई करें। यदि माहू (अल/चेपा) का आक्रमण सिंगरों के लिए उगाई गई फसल पर हो जाए तो 250-400 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 250-400 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। कीटनाशक के छिड़काव के बाद एक सप्ताह तक फसल को खाने के काम में न लें।

आलू

अगेती फसल की खुदाई पूरी हो चुकी होगी। उसे सुखा लें तथा कटे हुए व रोगी आलुओं को अलग कर लें। इन्हें बाज़ार बेचने के लिए भेजें या शीतालय में रखें। यदि फसल बीज के लिए है तो खुदाई करके बड़े, रोगी व दूसरी जाति के आलुओं को छांट कर अलग कर लें।

पालक

पालक की फसल की आवश्यकतानुसार कटाई करें तथा पत्तों को बंडलों में बांधकर बाज़ार भेजें। नियमित रूप से सिंचाई करें। खेत तैयार करके गर्मी की पालक के लिए बिजाई की जा सकती है। इसके लिए प्रति एकड़ 8 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होगी। जौबनेर ग्रीन, आल ग्रीन या एच एस 23 किस्मों को प्रयोग में लाएं। बीज को कतारों में 15-20 सैं.मी. की दूरी पर बीजें।

भिण्डी

गर्मी की फसल के लिए खेत की तैयारी करें। एक एकड़ के लिए 10 टन गोबर की खाद, 40 किलोग्राम नाइट्रोजन (90 किलोग्राम यूरिया खाद) व 24 किलोग्राम फास्फोरस (150 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट) की आवश्यकता होगी। एक एकड़ खेत के लिए 16-18 किलोग्राम बीज की आवश्यकता होगी। उन्नत किस्मों, पूसा सावनी, वर्षा उपहार या हिसार उन्नत को प्रयोग में लाएं। अच्छे अंकुरण के लिए बिजाई से पहले बीजों को रात भर पानी में भिगो लें। बाविस्टीन नामक दवा 2 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीजोपचार करें।

कद्दू जाति की अन्य सब्जियां

प्लास्टिक प्रोट्रेस विधि द्वारा कद्दू जाति की अन्य सब्जियों की अगेती पौध तैयार करने से फरवरी के शुरु में रोपाई की जा सकती है जिसके फलस्वरूप एक से दो महीने पहले फसल ली जा सकती है।

कद्दू जाति की अन्य सब्जियों की बिजाई का समय फरवरी-मार्च है। इन सब्जियों की मात्रा, उन्नत किस्में तथा उगाने की दूरी तालिका में दी गई

है। केवल पोटाश के सिवाय, खाद व उर्वरक की मात्रा खरबूजा व तरबूज के बराबर दें।

अन्य सब्जियां

गर्मी की अन्य सब्जियां, जैसे ग्वार, शकरकन्दी (तनों के लिए) तथा लोबिया की बिजाई अभी भी की जा सकती है। अरबी की बिजाई भी इसी समय हो सकती है। एक एकड़ खेत हेतु बिजाई के लिए 320-400 कि.ग्रा. गांठों की आवश्यकता होगी। खेत में उचित नमी का ध्यान रखें।

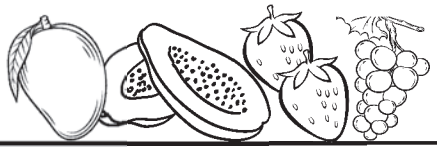

फलों में

संतरा, माल्टा, नींबू आदि

750 ग्राम यूरिया प्रति पौधा इस महीने के मध्य तक अवश्य डाल दें। नए पौधों पर लगाए गए छप्पर आदि दूसरे सप्ताह के बाद हटा सकते हैं क्योंकि मौसम कुछ गर्म होना शुरू हो जाएगा।

नींबू का सिल्ला व सफेद मक्खी रस चूसकर बहुत हानि पहुंचाते हैं। सुरंगी कीट नए पत्तों पर टेड़ी-मेड़ी, चमकीली लाइन बना देता है जिससे पत्ते पूरी तरह मुड़ जाते हैं। नए फल कमज़ोर हो जाते हैं तथा कम भी लगते हैं। इन कीटों की रोकथाम के लिए फूल खिलने से पहले नया फुटाव आने पर 625 मि.ली. रोगोर 30 ई.सी. या 500 मि.ली. न्यूवाक्रान/मोनोसिल 36 डब्ल्यू.एस.सी. को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ छिड़कें। इसे नींबू जाति के सभी पौधों तथा बाड़ की झाडियों पर भी छिड़कें तो अधिक लाभ होगा।

छाल खाने वाली सूण्डी अपने मल व लक्कड़ के बुरादे से एक मोटी झिल्ली-सी बनाकर इसके नीचे तनों व टहनियों की छाल खाती है। वह तनों में सुराख भी बनाती है। इसकी रोकथाम के लिए रूई के फोहों को दवाई के घोल में डुबोकर किसी धातु की तार की सहायता से कीड़ों के प्रत्येक सुराख के अंदर डाल दें और सुराख को गीली मिट्टी से ढक दें। 10 लीटर पानी में घोल बनाने के लिए 5 मि.ली. मिथाइल पैराथियान (मैटासिड) 50 ई.सी. को घोलकर 5 मि.ली. घोल प्रति सुराख के हिसाब से डालें। दवाइयों की मात्रा इस तरह रखें। इसके अतिरिक्त मिट्टी के तेल, साबुन व पानी का 10% घोल (1 लीटर मिट्टी का तेल +100 ग्राम साबुन + 9 लीटर पानी) भी काफी प्रभावकारी व अच्छा सिद्ध हुआ है।

मोटल लीफ (जस्ते की कमी) : पत्ते की नसों के दोनों ओर की जगह सफेद हो जाती है इसके लिए 500 मि.ग्रा. प्लान्टामाइसिन और 2 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराईड को प्रति लीटर पानी में घोल कर जुलाई, अक्तूबर, दिसम्बर व फरवरी में छिड़काव करें।

टहनीमार रोग : पौध गलन या गूंद निकलने वाले भागों को कुरेद कर साफ करें। बोर्डोपेस्ट लगाएं और फिर एक सप्ताह बाद दोबारा लगाएं। काट-छांट के बाद 0.3% कॉपर- ऑक्सीक्लोराईड का छिड़काव करें।

सूत्रकृमि भी पौधों को भारी हानि पहुंचाते हैं व इनकी रोकथाम के लिए कार्बोफ्यूरान (फ्यूराडान 3 जी.) 13 ग्राम प्रति वर्ग मीटर या नीम की खली 1 कि.ग्रा. प्रति पौधा व 7 ग्राम कार्बोफ्यूरान 3जी. के दाने प्रति वर्ग मी. की दर से तने के आस-पास के 9 वर्गमीटर क्षेत्र में मिट्टी में मिलाएं। दवा डालने के तुरंत बाद प्रचुर मात्रा में पानी दें। इसका प्रयोग फूल आने से पहले और फल तोड़ने के बाद ही करें। दवाई डालने से पहले ज़मीन को भुरभुरा कर लें। ये बहुत ज़हरीली दवाएं हैं। अत: इन्हें बड़ी सावधानी से काम में लाएं।

संतरा व माल्टा में कोढ़ से पत्तों, टहनियों और फलों पर गहरे-भूरे रंग के खुरदरे धब्बे पड़ जाते हैं। टहनीमार रोग से टहनियां ऊपर से सूखनी शुरू हो जाती हैं, कभी-कभी बड़ी टहनियां भी सूख जाती हैं। पत्तों पर दाग पड़ जाते हैं और फल व तने भी गल जाते हैं। इन बीमारियों के नियंत्रण के लिए रोगी टहनियों की काट-छांट करें और इसके बाद 0.3 प्रतिशत कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का पहला छिड़काव अक्तूबर में, दूसरा छिड़काव दिसम्बर में व तीसरा फरवरी में करें।

तरबूज व खरबूजा

तरबूज व खरबूजा की अगेती फसल लेने के लिए इन फलदार सब्जियों की प्लास्टिक प्रोट्रेस विधि द्वारा पौधे तैयार करके फरवरी के शुरु में रोपाई कर दें।

इन फसलों की बिजाई फरवरी के शुरू से ही करें। तरबूज की किस्में चार्लेस्टन ग्रे या शूगर बेबी तथा खरबूजे की किस्में हरा मधु या पंजाब सुनहरी प्रयोग में लाएं। यदि बिजाई से पहले बीजोपचार कर लें तो उचित होगा। (2.0 ग्राम बाविस्टीन प्रति किलोग्राम बीज की दर से)। तरबूज के लिए बीज की मात्रा लगभग 1.5 से 2.00 किलोग्राम प्रति एकड़ तथा खरबूजे की एक किलोग्राम प्रति एकड़ है। खेत तैयार करते समय 4-6 टन गोबर की खाद, 6 किलोग्राम नाइट्रोजन (15 किलोग्राम यूरिया खाद), 10 किलोग्राम फास्फोरस (60 किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट) तथा 10 किलोग्राम पोटाश (16 किलोग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश, जहां पर पोटाश की कमी हो) दें तथा खड़ी फसल में 14 किलोग्राम नाइट्रोजन (30 किलोग्राम यूरिया खाद) उर्वरकों द्वारा दो बार में टॉप ड्रेसिंग करें। खरबूजे की बिजाई 2.5 मीटर चौड़ी डोल में किनारों पर 60 सैं.मी. के फासले पर करें। खरबूजे की बिजाई हेतु शूगर बेबी किस्म के लिए 3 मीटर और चार्लेस्टन ग्रे के लिए 4 मीटर चौड़ी क्यारियां बनाएं तथा क्यारियों के दोनों ओर 60 सैं. मी. की दूरी पर बीज बोएं। खेत में नमी का ध्यान रखें।

अंगूर

पुरानी बेलों में यूरिया 337 ग्राम व 2 कि.ग्रा. सुपरफास्फेट इस महीने के पहले सप्ताह तक अवश्य डाल कर पहली सिंचाई करें। इसके साथ-साथ नए पौधे भी 10 फरवरी तक ज़रूर लगा लें। अगर काट-छांट का कार्य बाकी है तो इस महीने के पहले सप्ताह तक अवश्य पूरा कर लें। काट-छांट के बाद बाविस्टीन नामक दवा 0.2% का छिड़काव करें। नई

बढ़वार आने से पहले छिड़काव अवश्य करें। अंगूर में सूत्रकृमि रोग के नियंत्रण के लिए नींबू जाति के पौधे की भांति उपचार करें।

आम

पोटाश खाद पोटाशियम सल्फेट के रूप में अवश्य दें। इस तरह से प्रति पौधा आधा किलोग्राम यूरिया और एक किलोग्राम पोटाशियम सल्फेट पौधे की छतरी के नीचे तने से 2-3 फुट की दूरी पर अवश्य बिखेर दें और अच्छी तरह से गोड़ाई करें और सिंचाई भी ज़रूर करें।

पेड़ों के तनों पर जो अल्काथीन शीट लगा रखी है उसके नीचे एकत्रित मीली बग के नियंत्रण के लिए 100 मि.ली. मैटासिड 50 ई.सी. या 300 मि.ली. एकालक्स 25 ई.सी. को 50 लीटर पानी में घोलकर एक एकड़ बाग के पेड़ों पर छिड़काव करें। पत्तों, टहनियों, फूलों आदि पर चढ़े कीटों को मारने के लिए 500 मि.ली. मैटासिड 50 ई.सी. या 1.5 लीटर एकालक्स 25 ई.सी. को 500 लीटर पानी में घोल कर प्रति एकड़ छिड़कें।

आम का तेला इस महीने प्राय: आक्रमण करता है। इसकी रोकथाम के लिए इस महीने के अंत में 500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी. को 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति एकड़ छिड़कें। गुच्छा-मुच्छा ग्रस्त टहनियों को काटकर जला दें व 0.2 प्रतिशत कैप्टान व मैलाथियान 0.1 प्रतिशत नामक दवा के मिश्रण का छिड़काव करें। यह क्रिया 10-12 दिन के अंतराल पर दोहराएं।

आड़ू, अलूचा और नाशपाती

आधी यूरिया फूल आने से पहले आड़ू (450 ग्राम), अलूचा (180 ग्राम) व नाशपाती में (500 ग्राम) ज़रूर डाल दें और हल्की सिंचाई कर लें। फूल आते समय सिंचाई न करें।

बेर

बेर की मक्खी की लट (मैगट) फलों को अंदर से काना कर देती हैं। इनकी रोकथाम के लिए 500 मि.ली. मैलाथियान 50 ई.सी.+5 कि.ग्रा. गुड़ को 500 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ बाग में छिड़काव करें। अगर ज़रूरी हो तो 10 दिन के बाद यही कीटनाशक दोबारा छिड़कें। दोबारा कीटनाशक दवा का छिड़काव करने के कम से कम दो दिन बाद ही खाने के लिए फल तोड़ें व अच्छी तरह पानी से धोकर प्रयोग करें। प्रतिदिन गिरे फलों को एकत्रित करके ज़मीन में दो फुट की गहराई पर दबा दें।

बेर के नए पौधे लगाने का कार्य 15 फरवरी तक पूरा करें तथा पौधे लगाने के पश्चात् पौधों की सिंचाई करते रहें।

अमरूद

जुलाई-अगस्त में अमरूद की फसल लेने के लिए खाद आदि इस महीने के पहले सप्ताह में (गोबर की खाद 75 किलोग्राम, सुपर फास्फेट 625 ग्राम, 250 ग्राम सल्फेट ऑफ पोटाश तथा 750 ग्राम यूरिया) अवश्य डाल दें और हल्की सिंचाई करें। पहले सप्ताह तक वैज ग्राफ्टिंग विधि से कलमी पौधे तैयार कर सकते हैं।

लीची व चीकू

लीची में 875 ग्राम और चीकू के पौधों में 400 ग्राम यूरिया प्रति पेड़ डालकर निराई-गोड़ाई करें और हल्की सिंचाई भी करें।

आंवला

नए पौधे लगाने का कार्य 15 फरवरी तक पूरा करें तथा पौधे लगाने के पश्चात् गर्मियों में पौधों की सिंचाई 4-5 दिन पर तथा सर्दियों में 7-10 दिन पर करते रहें। ढाई किलोग्राम सिंगल सुपर फास्फेट और 500 ग्राम यूरिया प्रति पौधा डालकर निराई-गोड़ाई करें और हल्की सिंचाई करें।

पपीता

नये पौधों को सर्दी से बचाने के लिए बनाए गए छप्परों को दूसरे सप्ताह में हटा दें। पौधों में प्रति पेड़ आधा किलोग्राम मिश्रित खाद जिसमें अमोनियम सल्फेट, सिंगल सुपर फास्फेट व पोटाशियम सल्फेट 2 : 4 : 1 के अनुपात में डालें और सिंचाई 8-10 दिन के अंतर पर करते रहें। इसके अतिरिक्त 20 कि.ग्रा. गोबर की खाद प्रति पौधा अवश्य डालें। खाद को तने से 35-40 सैं.मी. की दूरी पर चारों ओर डालें।

नर्सरी में क्रियाएं

नर्सरी में छोटे पौधों को सर्दी से बचाने के लिए जो छप्पर बनाए गए थे उनको दूसरे सप्ताह के बाद हटा दें। प्योंदी पौधों से अगर फालतू टहनियां प्योंदी बिंदु के नीचे आ रही हों तो उनको काट दें। प्योंदी पौधों को डंडी से सहारा दें, ताकि वे अपनी बढ़वार सीधी कर सकें। जट्टी-खट्टी में रोगी पौधों को निकाल दें। आम, लोकाट, अमरूद के देसी पौधों को अनार्चिंग के लिए गमलों में बदलें। अमरूद, आड़ू, जट्टी-खट्टी के बीजों को नर्सरी में बीजें। अंगूर, नाशपाती, अनार, अंजीर, शहतूत, मीठा नींबू और बारहमासी लेमन की कलम, तैयार की गई क्यारियों में लगा दें।

पौधे लगाना : पतझड़ी फलदार पौधों व बेर तथा आंवला को दूसरे सप्ताह तक नंगी जड़ों से लगाया जा सकता है लेकिन इसके बाद पौधों को गाची समेत ही लगाएं तथा सदाबहार फलदार पौधों को दूसरे सप्ताह में लगाना शुरू कर दें।

पौधे की सिंचाई : फलदार पौधे जो पिछले साल लगाए गए थे उनकी बढ़वार काफी जल्दी होगी इसलिए हर पौधे का ज़मीन की सतह से 60-70 सैं.मी. तक एक ही तना रखें और बराबर की जो बढ़वार आती है तो एक माह के अंतराल पर एक-एक टहनी काटते रहें और पौधों पर 4-6 टहनियां रखते रहें। इसके बाद ज़मीन की सतह से 3 और 5 फुट की ऊंचाई तक 4-5 द्वितीय टहनियां लें। पौधों को बांस की डंडी से सहारा भी अवश्य दें।

पशुओं में

गाय-भैंस

गायों व भैंसों को साफ रखना चाहिए। छोटे बच्चों के आवास में बिछावन का प्रयोग करें, इसे गीला न होने दें और 7-10 दिन में बदल देना

चाहिए। इन दिनों भैंसें गर्मी में आती हैं। गर्मी में आने के 8-10 घंटे पश्चात् उनकी मिलाई करानी चाहिए। अच्छी नस्ल के कट्टे व कट्टियां तथा अच्छी बच्छियां लेने के लिए अपने नज़दीकी कृत्रिम गर्भाधान केन्द्रों से गाय-भैंसों को नए दूध कराएं। गाय-भैंसें नियमित रूप से गर्मी में आती रहें, इसके लिए उन्हें संतुलित आहार दें और उनके आहार में 50-60 ग्राम खनिज मिश्रण अवश्य मिलाएं। भैंसें अधिकतर रात को या सुबह के समय गर्मी के लक्षण दिखाती हैं। इसलिए सुबह-सुबह पशु की जांच करके गर्मी में आए पशुओं की पहचान करें। सर्दी से बचाव के लिए पशुओं को रात को सूखा चारा या तूड़ी डालें।

गाय-भैंस को मुंह व खुर के रोग से बचाने के लिए टीके समय पर लगवाएं। इस रोग का पहला टीका बछड़े-बछडियों को 6 सप्ताह की आयु या इससे पहले, दूसरा टीका पहले टीके के 6 सप्ताह बाद, तीसरा टीका दूसरे टीके के 3 मास उपरांत और तत्पश्चात् यह टीका हर 6 मास बाद लगवाना चाहिए।

थन सूजन रोग से पशुओं को सुरक्षित रखने के लिए पशुओं को गीले में न रहने दें और पूरे हाथ से मुट्ठी बांध कर दूध निकालें। दूध निकालने से पहले थनों को साफ पानी से धोकर साफ कपड़े से पोंछना चाहिए। यदि थनों को अंगूठे और उंगलियों के बीच में रखकर दूध निकाला जाएगा तो पशुओं के थन गंठीले हो जाते हैं और उनमें थन सूजन का रोग लग जाता है।

आप अपने पशु चिकित्सक की सलाह से पशुओं को कृमि नाशक दवाइयां दें ताकि उन्हें पेट के कीड़ों से बचाया जा सके।

बरसीम अधिक खिलाने से पशुओं के पेट में अफारा आ जाता है। पशुओं को बरसीम के अफारे से बचाने के लिए बरसीम के हरे चारे में सूखा चारा जैसे कि तूड़ी, कड़वी तथा कूटी इत्यादि मिलाकर खिलाएं। यदि बरसीम पहले दिन की हो तो उसे दूसरे दिन खिलाने से पहले धूप लगाएं। अफारा आने पर 500 ग्राम सरसों या अलसी के तेल में 60 ग्राम तारपीन का तेल व 10 ग्राम हींग मिलाकर पिलाएं तथा तुरंत पशु चिकित्सक से संपर्क करें।

भेड़-बकरी

भेड़-बकरियों को अपने क्षेत्र के पशु चिकित्सक की सलाह अनुसार दवाई पिलाकर कृमिरहित करें। भेड़-बकरियों को साफ-सुथरे तथा सूखे स्थान पर रखें। भेड़ों से अच्छी और अधिक ऊन प्राप्त करने के लिए उनमें नस्ल का सुधार करें। इसके लिए उन्हें अच्छी नस्ल के मेढ़ों से मिलाएं। इस प्रकार जो नई भेड़ें पैदा होंगी, वे अच्छी नस्ल की होंगी तथा अधिक ऊन व आय आपको मिलेगी।

कुक्कुटों में

जिन चूजों की आयु 6 से 8 सप्ताह की हो गई हो उन्हें रानीखेत की बीमारी से बचाव का दूसरा टीका लगवाएं। यदि मुर्गियों के शरीर पर जूएं व चिचडियां हों तो इसके लिए आप मैलाथियान और सेविन नामक दवाओं का पशु चिकित्सक की सलाह से मुर्गीघरों व मुर्गियों पर छिड़काव कराएं। चिचडियों के कारण मुर्गियों में चीचड़ी ज्वर आ सकता है। इस रोग से मुर्गियों में 43 डिग्री से 44 डिग्री तक बुखार चढ़ जाता है, प्यास खूब लगती है, पीले और हरे रंग के दस्त लग जाते हैं और मुर्गियां काफी संख्या में मर जाती हैं। इस रोग के उपचार के लिए पशु चिकित्सक की सलाह लें। मांस के लिए रखे गए ब्रायलर चूजों को 6 से 8 सप्ताह की आयु में बेच देना चाहिए। यदि इन चूजों की आयु 8 सप्ताह से अधिक हो गई हो तो उन्हें रखना लाभदायक नहीं।

मुर्गीघरों में दिन और रात की रोशनी मिलाकर 16 घंटे होनी चाहिए। यदि रोशनी कम रहे तो मुर्गियां कम अंडे देंगी।

घर-आंगन में

हरियाणा एक शाकाहारी राज्य है। शाकाहारी व्यक्तियों के लिए खुम्ब एक अत्यन्त लाभकारी आहार है। पौष्टिकता के आधार पर खुम्ब की तुलना अन्य दालों, सब्जियों से की जाए तो सोयाबीन की अपेक्षा खुम्ब की पौष्टिकता अधिक है। इसमें उच्च कोटि के प्रोटीन, विटामिन, खनिज लवण तथा रेशे पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं। इसमें कार्बोहाईड्रेट और वसा की मात्रा कम होने से यह हृदय एवं मधुमेह से पीड़ित रोगियों के लिए एक पौष्टिक आहार है। इसमें पाई जाने वाली प्रोटीन अधिक पाचनशील है। उत्तम कोटि की प्रोटीन होने के कारण कैल्शियम और फास्फोरस का भी उचित शोषण होता है। अत: खुम्ब का प्रयोग प्रतिदिन के भोजन में विभिन्न प्रकार के स्वादिष्ट व्यंजन बनाकर कर सकते हैं।

- लोहे के बर्तन में भोजन पकाएं जिससे उसमें पोषक तत्त्व लोहा बढ़ जाता है जो एनीमिया से पीड़ित महिलाओं एवं किशोरियों के लिए अति आवश्यक है।
- भोजन पकाने में खाने के सोडे का प्रयोग न करें।
- हरी सब्जियों को काटने से पहले धोएं।
- सब्जियों का पतले से पतला छिलका उतारें।
- सब्जियों को बड़े-बड़े टुकड़ों में काटें।
- सब्जियों को कम से कम पानी में पकाएं, इससे उसमें विद्यमान विटामिन, खनिज लवण सुरक्षित रहते हैं।
- चावलों को उबालने के बाद उसमें से फालतू पानी को न निकालें।

एक कदम स्वच्छता की ओर

पराली : समुचित प्रबंधन उपाय

✍ **सीमा, रीटा दहिया एवं कविता**
मृदा विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

वर्तमान परिदृश्य में बढ़ती आबादी के कारण, ठोस अपशिष्ट प्रबंधन एक महत्त्वपूर्ण एवं गंभीर समस्या है। देश में प्रतिवर्ष लगभग 500-550 मिलियन टन फसल अवशेष उत्पन्न होता है। जिसमें मुख्यत: चावल और गेहूं के अवशेष हैं। गंगा-सिंधू मैदान में चावल-गेहूं एक मुख्य फसल प्रणाली है और भारत में उत्पादन होने वाले कुल फसल अवशेषों में चावल 34 प्रतिशत एवं गेहूं 22 प्रतिशत योगदान देता है। उत्तरी-पश्चिम भारत में 75 प्रतिशत गेहूं के भूसे को जानवरों के चारे के लिए उपयोग का प्रचलन है परंतु चावल के भूसे को चारे के रूप में प्रयोग नहीं किया जाता। इसलिए, चावल की पराली प्रबंधन एक गंभीर समस्या है। फलस्वरूप सभी किसान मशीनीकृत कटाई एवं फसल अवशेषों को खेत में जलाने पर निर्भर हैं। लेकिन इस अभ्यास के बहुत ही नाकारात्मक प्रभाव हैं चाहे वह पर्यावरण में प्रदूषण या मिट्टी की उर्वरकता में गिरावट हो।

चावल की कटाई के बाद व गेहूं की बुवाई के लिए खेत तैयार करने के लिए समय की कमी, इस समस्या को और बढ़ाती है। इसलिए किसान चावल की पराली के प्रबंधन की उचित तकनीक के अभाव में पराली को खेत में ही जलाते हैं। पराली को जलाने से स्थानीय वायु प्रदूषण में वृद्धि होती है।

पराली जलाने से होने वाले नुकसान :

1. पराली जलाने से तापमान में बढ़ावा एवं मिट्टी की नमी में कमी हो जाती है।
2. पराली को खेत में जलाने से मिट्टी की उर्वरक शक्ति एवं गुणवत्ता पर गहरा असर पड़ता है।
3. पराली जलाने से वायु प्रदूषण का स्तर बढ़ जाता है, साथ ही विभिन्न घातक गैसें मानसिक एवं शारीरिक बीमारियों का कारण बनती हैं।
4. पराली जलाने से साथ के खेतों में आग के फैलने का खतरा बना रहता है।
5. मिट्टी के स्वास्थ्य में गिरावट आती है।
6. कई बार पराली को खेत में जलाने से हादसों का खतरा बना रहता है। इससे खेत में लगीआग आस-पास के इलाकों में फैल जाती है। जिसके कारणजान-माल का खतरा बना रहता है।
7. फसलों के अवशेषों में कई प्रकार के तत्व पाये जाते हैं और खेत में न मिलाकर जलाने से मिट्टी में इनके अभाव को देखा गया है। साथ ही यह कार्बनिक पदार्थों को भी नुकसान पहुंचाता है।

अत: पराली के समुचित प्रबंधन के लिए, निम्नलिखित उपाय कारगार साबित हो सकते हैं:

1. पराली को खेत में हल से जोतना : पराली को खेत में ही हल से जोतकर मिट्टी में मिलाने से मिट्टी की उर्वरक शक्ति एवं गुणवत्ता को बढ़ाया जा सकता है। इस प्रक्रिया से वायु प्रदूषण से बचाव होता है। आधुनिक तकनीक से पराली की मिट्टी में अपघटन दर को तेज़ किया जा सकता है। इससे मिट्टी के पानी सोखने की शक्ति बढ़ती है। अधिक बरसात वाले क्षेत्रों में मिट्टी के कटाव को रोका जा सकता है जोकि मिट्टी की गुणवत्ता को कायम बनाए रखने में सिद्ध होगा।

2. मशरूम उत्पादन के लिए पराली का उपयोग : मशरूम उत्पादन के लिए चवाल की पराली का उपयोग किया जाता है। एक टन पराली से 50-100 किलोग्राम मशरूम पैदा किया जा सकता है। मशरूम की खेती एक लाभदायक कृषि व्यवसाय के साथ ही अनुचित प्रबंधन।

3. पराली से खाद तैयार करना : पराली को जलाने के बजाय खेत में ही खाद तैयार किया जा सकता है। फसल की कटाई के तुरंत बाद हल से अच्छी तरह जुताई कर इसमें 20-30 कि.ग्रा. यूरिया प्रति एकड़ पानी में घोलकर छिड़काव करें। मज़बूत डंठलों के लिए 'एजोटोबैक्टेर' का उपयोग करें।

4. ऊर्जा उत्पादन : चावल की पराली का उपयोग तापीय एवं रासायनिक प्रयोगों के माध्यम से ईंधन, बिजली या गर्मी उत्पन्न करने के लिए किया जा सकता है। पराली का अवायवीय पाचन एक लघु-स्तरीय ऊर्जा रूपांतरण तकनीक है जिसका प्रयोग बायोगैस उत्पन्न कर खाना पकाने के लिए किया जाता है।

5. बायोचार के रूप में प्रयुक्त : सूखे भूसे को ऑक्सीजन के बिना 300-6000 पर जलाया जाता है, इस प्रक्रिया को पायरोलिसिस कहते हैं। इस तकनीक से 'बायोनेर्जी' उत्पन्न की जाती है जिससे पराली को किसानों के खेतों में जलाने से रोका जा सकता है।बायोचार के मिट्टी में उपयोग से, मिट्टी की उर्वरक शक्ति को बढ़ाया जा सकता और अनुक्रंमाक कार्बन को मिट्टी के संरक्षण करने में मदद मिलती है।

उपर्युक्त सभी बातों को ध्यान में रखते हुए सभी किसानों से अनुरोध है कि कृपया पराली को जलाने की बजाय ऊपर दिए समुचित उपायों से पराली का प्रबंधन करें। ◆

(पृष्ठ 12 का शेष)

लगातार मांग करते हैं। उस समय पर, उच्च पौधों के लिए कम या कोई खनिज नाइट्रोजन उपलब्ध नहीं होती।

यह स्थिति तब तक बनी रहती है जब तक क्षय जीवों की गतिविधियों में धीरे-धीरे कमी न आ जाए, क्योंकि उनमें आसानी से ऑक्सीडाइजेबल कार्बन की कमी देखने को मिलती है। उनकी संख्या घट जाती है, कार्बन डाइऑक्साइड गठन बंद हो जाता है, सूक्ष्मजीवों द्वारा नाइट्रोजन की मांग कम तीव्र हो जाती है, फिर इन सब क्रियाओं के बाद नाइट्रेट्स की रिहाई आगे बढ़ सकती है। उपर्युक्त प्रक्रिया के बाद नाइट्रेट की मात्रा दिखाई देने लगती है, और इसके अलावा मूल परिस्थितियां प्रबल होती हैं, फिर कुछ समय के बाद, मिट्टी में नाइट्रोजन और आर्द्रता समृद्ध हो जाती है।

विघटन प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले कारक

- जलवायु की स्थिति, विशेष रूप से तापमान और वर्षा, मिट्टी में पाए जाने वाले नाइट्रोजन और कार्बनिक पदार्थ की मात्रा पर प्रभावशाली प्रभाव डालती है। गर्म से ठंडे क्षेत्रों की तरफ जाने से मिट्टी के कार्बनिक पदार्थ और नाइट्रोजन में वृद्धि होती है, इसी तरह की प्रवृत्ति सी/एन अनुपात में भी देखी जाती है।
- मृदा नमी मिट्टी में कार्बनिक और नाइट्रोजन के संचय पर सकारात्मक प्रभाव डालती है। आम तौर पर, तुलनात्मक स्थितियों के तहत, नाइट्रोजन और कार्बनिक पदार्थ प्रभावी नमी के रूप में बढ़ते हैं।
- इसके अलावा, जुताई कार्य कार्बनिक अवशेषों को तोड़ते हैं और उन्हें मिट्टी के जीवों के साथ सीधे संपर्क में लाते हैं, जिससे अपघटन की दर में वृद्धि होती है। आधुनिक संरक्षण टिलेज प्रथाएं मिट्टी में कार्बनिक पदार्थों के स्तर को बनाए रखने में मदद करती हैं। परंपरागत खेती की तुलना में, ये प्रथा मिट्टी की सतह पर या उसके आस-पास अवशेषों का उच्च अनुपात छोड़ देती हैं। यह तकनीक मृदा अपरदन को रोकती है और तेज़ी से होने वाले विघटन पर नज़र बनाए रखती है। ◆

पराली प्रबंधन में सुपर स्ट्रॉ मैनेजमेंट सिस्टम की उपयोगिता

✍ **अनिल कुमार, कनिष्क वर्मा एवं राजेश कुमार**
कृषि अभियांत्रिकी एवं प्रौद्योगिकी महाविद्यालय
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा एक कृषि प्रधान प्रदेश है। धान व गेहूं मुख्य खाद्य फसलें हैं। हरियाणा में धान लगभग 13 लाख हैक्टेयर भूमि पर उगाया जाता है। धान की कटाई अक्तूबर मध्य से लेकर नवंबर मध्य तक की जाती है और यही गेहूं की बिजाई का समय होता है। समय की कमी और मज़दूरों के न मिलने की समस्या के कारण लगभग 60 प्रतिशत धान की कटाई कम्बाईन हार्वेस्टर से की जाती है, जो हर साल बढ़ रही है। कम्बाईन धान को लगभग 30-40 सैं.मी. की ऊंचाई से काटती है तथा पीछे की तरफ एक लाइन में डाल देती है। कम्बाईन से कटे खेत को तैयार करने या सीधे बिजाई करने में किसान को बहुत परेशानी आती है और वह समय की कमी के कारण खेत मे आग लगा देते हैं जिससे प्रदूषण के साथ-साथ खेत की उर्वरा शक्ति व पराली में उपलब्ध पोषक तत्वों की भी हानि होती है। सामान्य कम्बाईन फसल के दाने निकालने के पश्चात् अवशेष को एक पंक्ति में सीधे खेत में छोड़ देती है जो गेहूं की बिजाई में सबसे ज़्यादा बाधा उत्पन्न करते हैं। इनके प्रबंधन के लिए स्ट्रॉ मैनेजमेंट सिस्टम एक प्रभावी मशीन है। इस स्ट्रा मैनेजमेन्ट सिस्टम को पंजाब कृषि विश्वविद्यालय ने सन् 2016 में विकसित किया था। यह कंबाइन हार्वेस्टर के पीछे लगने वाला एक अतिरिक्त अटैचमेंट है, जिसमें एक रोटर के ऊपर ब्लेड लगे होते हैं जो धान की पराली को 8-10 सैं.मी. के छोटे-छोटे टुकड़ों में काटकर समान रूप से खेत में फैला देते हैं जबकि सामान्य कम्बाईन हार्वेस्टर में इसकी लम्बाई 30-50 सैं.मी. होती है। इस विधि के साथ, अगली फसल की बुवाई से पहले किसानों को धान की पराली जलाने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। हरियाणा सरकार ने धान (चावल) की फसल कटाई के लिए उपयोग होने वाली कंबाइन हार्वेस्टर मशीनों में धान बेल अवशेष बेल प्रबंधन हेतु स्ट्रॉ मैनेजमेंट सिस्टम को अनिवार्य किया है। यह निर्देश वायु धारा (रोकथाम एवं प्रदूषण नियंत्रण) अधिनियम, 1981 की धारा 31 ए. के तहत जारी किए गए थे तथा जिन नये कंबाइन हार्वेस्टर में एस.एम.एस अटैचमेंट नहीं है उनके पंजीकरण को भी रोक दिया है। इसी बीच, नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल ने कृषि अपशिष्ट जलाने पर जुर्माना निर्धारित कर दिया है और फसल अवशेष जलाने वालों पर प्रबल होने के लिए राज्य सरकारों को तकनीकी रूप से वैकल्पिक उपायों का सुझाव देने के निर्देश दिये हैं।

सुपर स्ट्रॉ मैनेजमेंट सिस्टम के लाभ :

- धान बेल अवशेष के छोटे-छोटे टुकड़ों को आसानी से मिट्टी के अंदर मिला सकते हैं या ज़ीरो टिल ड्रिल और हैप्पी सीडर का उपयोग करके इन्हे ज्यों का त्यों छोड़ा जा सकता है।
- गेहूं की बिजाई के लिए उपयोग होने वाले हैप्पी सीडर की कार्य क्षमता में 20 प्रतिशत तक की वृद्धि होती है।
- अगली फसल की बुवाई से पहले किसानों को धान की पराली जलाने की आवश्यकता नहीं पड़ती है।
- मिट्टी की सतह पर उपस्थित अवशेष एक मल्च के रूप में काम करते हैं, जो गेहूं के अंकुरण में मदद के साथ-साथ नमी को बचा कर जल संरक्षण में भी सहायक हैं।
- अवशेष समय के साथ गल-सड़ कर मिट्टी में जैविक तत्वों को बढ़ाने, पोषक तत्वों को बनाए रखने व मिट्टी की संरचना को सुधारने में भी मदद करते हैं।

तालिका 1. कम्बाईन हार्वेस्टर से जुड़ने वाला सुपर स्ट्रॉ मैनेजमेंट सिस्टम की तकनीकी विशेषताएँ

1.	कम्बाईन	स्वयं-चालित
2.	कटर बार की चौड़ाई, मि.मी. रोटर	4270
	रोटर	
3.	रोटर का व्यास, मि.मी.	165-170
4.	रोटर के ऊपर एक कटर में खूंटियों की संख्या	6
5.	रोटर की परिधि पर खूंटियों की कतार की संख्या	4
6.	फ्लेल की लंबाई, मि.मी.	172
7.	फ्लेल की चौड़ाई, मि.मी.	50.8
8.	फ्लेल की मोटाई, मि.मी.	5.4
9.	एक सेट में फ्लेल की संख्या	2
10.	एक सेट में फ्लेल के बीच में दूरी, मि.मी.	38-40
11.	फ्लेल की दो कतारों के बीच में दूरी, मि.मी दांतेदार	201.4
12.	ब्लेड की कतारों की संख्या	1
13.	एक कतार में दांतेदार ब्लेड की संख्या	24
14.	दांतेदार ब्लेड के बीच की दूरी, मि.मी.	50
15.	ब्लेड तथा कनकेव के बीच गेप, मि.मी	22.5
16.	रोटर की गति, आर.पी.एम.	1600-1800
	स्प्रेडर	
17.	स्प्रेडर की चौड़ाई, मि.मी.	1676.4
18.	फ्लेल की संख्या, मि.मी.	6.2
19.	फ्लेल की लंबाई, मि.मी.	47
20.	स्पेडर का ज़मीन से कोण, अंश	9
21.	स्पेडर की चादर की मोटाई, मि.मी.	2.5-3
22.	एस एम एस की चादर की मोटाई, मि.मी.	4-5
23.	एस एम एस से निकले हुए अवशेष की लंबाई, मि.मी.	<20

हॉर्स पॉवर की आवश्यकता : स्वयं चालित कम्बाइन हार्वेस्टर की 10 से 12 हॉर्स पॉवर।

अनुमानित कीमत : स्ट्रॉ मैनेजमेंट सिस्टम की कीमत लगभग 1 लाख रुपये है। ◆

निर्माता:

तालिका 2. कम्बाईन हार्वेस्टर से जुड़ने वाला सुपर स्ट्रॉ मैनेजमेंट सिस्टम के निर्माताओं की सूची

क्र.	फर्म का नाम तथा पता	नाम तथा दूरभाष नं.
1.	महिंद्रा-महिंद्रा लिमिटेड स्वराज डिवीज़न, फेस 4, इंडस्ट्रियल एरिया, एस.ए.एस. नगर (मोहाली) चंडीगढ़-160055	श्री सरबजीत रनदेव 0172-2271820
2.	दसमेश मैकेनिकल वर्क्स नाभा-मलेरकोटला रोड़, अमरगढ़, पंजाब-148018	श्री सरबजीत सिंह 9216272149 01675-284221
3.	सोनालिका इंडस्ट्रीज़ विलेज चक गुजरां, पोस्ट ऑफिस पिपलानवल्स-146022, जालंधर रोड, होशियारपुर (पंजाब)	श्री सचिन ठाकुर 8725884800, 1882260065, 66, 68
4.	धालीवाल एग्रो तलवंडी रोड़, विलेज टेहना, ज़िला फरीदकोट- 151203 (पंजाब)	श्री गुरमीत सिंह 9888096500, 9417198764
5.	प्रीत एग्रो इंडस्ट्रीज़ प्राइवेट लिमिटेड पोस्ट ऑफिस नंबर 29, पटियाला रोड़, नाभा-147201 (पंजाब)	श्री योगेश कुमार 8146520649, 01765220400

फसल अवशेष : प्रबंधन विकल्प एवं प्रतिस्पर्धी उपयोग

✍ **अजय कुमार, जगदीश प्रशाद एवं अभिलाष**[1]
सूक्ष्म जीव विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

फसल अवशेष महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन हैं और इन अवशेषों का पुनर्चक्रण (रीसाइक्लिंग) एक बड़ी चुनौती है। भारत एक कृषि-प्रधान देश है जो सालाना फसल अवशेषों का बड़ी मात्रा में उत्पादन करता है। फसल की कटाई और थ्रेस के बाद मैदान में छोड़े गए पौधों के कुछ हिस्सों में फसल अवशेष हैं। इन सामग्रियों को कभी-कभी अपशिष्ट पदार्थों के रूप में माना जाता है जिन्हें निपटान की आवश्यकता होती है, लेकिन यह महसूस हो गया है कि वे महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन हैं और अपशिष्ट नहीं हैं। फसल अवशेषों के पुनर्चक्रण को फसलों की पोषक आवश्यकता को पूरा करने के लिए अधिशेष फार्म अपशिष्ट को उपयोगी उत्पाद में परिवर्तित करने का लाभ होता है। यह मिट्टी की शारीरिक और रासायनिक स्थिति भी बनाए रखता है और फसल उत्पादन प्रणाली के समग्र पारिस्थितिक संतुलन में सुधार करता है। फसल के बाद मुख्य रूप से बाएं ओवर स्ट्रा और स्टब्बल को साफ करने के लिए खेतों में अप्रयुक्त फसल अवशेषों का एक बड़ा हिस्सा जला दिया जाता है। श्रम की अनुपलब्धता, क्षेत्र से अवशेष हटाने की उच्च लागत और फसलों की कटाई में जोड़ों के बढ़ते उपयोग क्षेत्र में फसल अवशेषों को जलाने के मुख्य कारण हैं। फसल अवशेषों की जलन, पर्यावरण प्रदूषण, मिट्टी की उर्वरता में गिरावट, स्वास्थ्य समस्याओं और हरे घर के गैसों के उत्सर्जन का कारण बनती है इसलिए, फसल अवशेषों के उचित प्रबंधन का एक बड़ा महत्व माना जाता है। इस समस्या से बचने के लिए, किसान फसल अवशेषों को जलाने का सहारा लेते हैं, जो न केवल विशाल बायोमास के नुकसान का कारण बनता है बल्कि पर्यावरण प्रदूषण का कारण बनता है। इसलिए इस मूल्यवान संसाधन को प्रबंधित करने के तरीकों और साधनों को अपनाने की आवश्यकता है। संरक्षण कृषि आधारित फसल प्रबंधन प्रौद्योगिकियां जो परंपरागत प्रथाओं की तुलना में अधिक संसाधन-कुशल हैं। संरक्षण कृषि प्रथाएं फसल अवशेषों का कुशल उपयोग कर सकती हैं।

फसल अवशेषों पर खेती के खेतों के पीछे कारण

फसल अवशेषों के खेतों में जलने के प्रतिकूल परिणामों के बारे में अच्छी तरह से जानते हैं। हालांकि, बढ़ी हुई मशीनीकरण की वजह से, विशेष रूप से गठबंधन कटाई करने वालों, पशुओं की संख्या घटने, खाद के लिए आवश्यक लंबी अवधि और वैकल्पिक आर्थिक रूप से व्यवहार्य समाधानों की अनुपलब्धता के कारण, किसानों को अवशेषों को जलाने के लिए मज़बूर किया जाता है। देश में विशेष रूप से भारत-गंगा मैदानों (आईजीपी) में गठबंधन कटाई करने वालों की संख्या 1986 में नाटकीय रूप से 1986 से बढ़कर 2010 में 10000 हो गई है। आईजीपी के उत्तर-पश्चिमी भाग (पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश) की कटाई के तहत फसल वाले क्षेत्र का लगभग 75% हिस्सा है। केंद्रीय और पूर्वी उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, बिहार, राजस्थान, मध्य प्रदेश और दक्षिणी राज्यों में चावल और गेहूं की फसलों की कटाई के लिए कटाई करने वालों का व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। संयोजनों के उपयोग में तेज़ वृद्धि के प्रमुख कारण हैं।

श्रम की कमी, कटाई के मौसम के दौरान उच्च मज़दूरी, कटाई और थकावट और मौसम की अनिश्चितता में आसानी। गठबंधन कटाई का उपयोग करने पर लगभग 80% अवशेष मैदान में ढीले भूसे के रूप में छोड़े जाते हैं जो अंत में खेत पर जला दिया जाता है। फसल अवशेषों के जानबूझकर जलने के पीछे कुछ अन्य कारण भी हैं। इनमें खेतों, मिट्टी की उर्वरता वृद्धि, और कीट और चरागाह प्रबंधन का समाशोधन शामिल है। कृषि जलने पर परंपरागत रूप से अवशिष्ट बायोमास से खेतों को साफ करने का एक तेज़ तरीका प्रदान करता है, इस प्रकार, भूमि की तैयारी और बुवाई/रोपण की सुविधा प्रदान करता है। यह सीधे उन्हें हटाने या अपने प्राकृतिक आवास को बदलकर, खरपतवार, कीड़े और बीमारियों को नियंत्रित करने का एक तेज तरीका भी प्रदान करता है। उत्तर-पश्चिम भारत में चावल की कटाई और गेहूं की बुवाई के बीच का समय अंतर, उदाहरण के लिए, केवल 15-20 दिन है। इस छोटी अवधि में, किसान चारा या अन्य किसी भी उपयोग के लिए इसे कटाई के बजाय चावल के भूसे को जला देना पसंद करते हैं। बाद के विकल्पों में भी एक विशाल परिवहन लागत शामिल है। मिट्टी की उर्वरता को बढ़ावा देने के लिए ऑन-फार्म जलने को भी माना जाता है, हालांकि वास्तव में जलती हुई मिट्टी की उर्वरता पर असर पड़ता है।

फसल अवशेषों के प्रतिस्पर्धी उपयोग

1. पशुधन फीड : भारत में, फसल अवशेष परंपरागत रूप से पशु फीड के रूप में या कुछ योजकों के पूरक के रूप में उपयोग किया जाता है। हालांकि, फसल अवशेष, अप्रत्याशित और पाचन में कम होने के कारण, पशुधन के लिए एकमात्र राशन नहीं बना सकते हैं। फसल अवशेष कम-घनत्व वाले तंतुमय पदार्थ होते हैं, नाइट्रोजन में कम, घुलनशील कार्बोहाइड्रेट, खनिज और विटामिन, जो कि लिग्निन की भिन्न मात्रा के साथ होते हैं जो भौतिक बाधा के रूप में कार्य करते हैं और माइक्रोबियल ब्रेकडाउन की प्रक्रिया में बाधा डालते हैं। जानवरों की पोषण संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए, अवशेषों को यूरिया और गुड़ के साथ प्रसंस्करण और समृद्धि की आवश्यकता होती है, और हरी फोडर्स (चमकीले/गैर-पौष्टिक) और फल (सूर्य भांग, घोड़ा ग्राम, गायपा और ग्राम) स्ट्रॉ के साथ पूरक होता है।

2. खाद बनाने : फसल अवशेष परंपरागत रूप से खाद तैयार करने के लिए इस्तेमाल किया गया है। इसके लिए, फसल अवशेषों का उपयोग जानवरों के बिस्तर के रूप में किया जाता है और फिर गोबर के गड्ढे में ढेर होते हैं। प्रत्येक किलोग्राम भूसे में लगभग 2-3 किलोग्राम पशु मूत्र अवशोषित होता है, जो इसे एन के साथ समृद्ध करता है। खाद पर एक हैक्टेयर भूमि से चावल की फसल के अवशेष, पोषक तत्वों के रूप में लगभग 3 टन खपत पोषक तत्वों के रूप में समृद्ध होते हैं। अपघटन प्रक्रिया, जिसे सूक्ष्मजीवों के एक संघ द्वारा जल्दी किया जाता है, में 75-90 दिन लगते हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (आईएआरआई) , नई दिल्ली, ने अच्छी गुणवत्ता वाले खाद बनाने के लिए बायोमास-कंपोस्ट इकाई सफलतापूर्वक विकसित की है। इस इकाई ने लगभग 4000 टन खाद तैयार किया।

[1]मौसम विज्ञान विभाग, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार।

3. ऊर्जा स्रोत : बायोमास को ऊर्जा के स्रोत के रूप में कुशलतापूर्वक उपयोग किया जा सकता है और इसके पर्यावरणीय फायदे के कारण दुनिया भर में इसकी रुचि है। हाल के वर्षों में, ऊर्जा उत्पादन के लिए फसल अवशेषों और जीवाश्म ईंधन के विकल्प के रूप में वृद्धि हुई है। सौर और हवा जैसे अन्य अक्षय ऊर्जा स्रोतों की तुलना में, बायोमास स्रोत स्टेक, सस्ती, ऊर्जा कुशल और पर्यावरण के अनुकूल है। कल्पतरु पॉवर ट्रांसमिशन लिमिटेड (केपीटीएल), एक अग्रणी वैश्विक इंजीनियरिंग, बिजली क्षेत्र में खरीद और निर्माण खिलाड़ी, पिछले कई वर्षों से राजस्थान के गंगानगर और टोंक ज़िलों में फसल अवशेषों से सफलतापूर्वक ऊर्जा पैदा कर रहा है। टोंक में, संयंत्र 80,000 टन बायोमास का उपयोग करता है, ज़्यादातर सरसों की फसल से, सालाना 1.5 लाख किलोवाट ऊर्जा भी उत्पन्न करता है।

ईआर दिन हालांकि, पौधे बड़ी मात्रा में जैव-राख पैदा करता है जो अपने प्रबंधन को लाभदायक ढंग से आवश्यक बनाता है।

4. जैव ईंधन और जैव-तेल उत्पादन : शराब में लिग्नो-सेल्यूलोसिक बायोमास के रूपांतरण का बहुत महत्व है क्योंकि इथेनॉल को ईंधन विस्तारक और ऑक्टेन-बढ़ाने वाले एजेंट के रूप में गैसोलीन के साथ मिश्रित किया जा सकता है या आंतरिक दहन इंजनों में एक साफ ईंधन के रूप में उपयोग किया जा सकता है। विभिन्न फीडस्टॉक (मक्का अनाज, चावल का भूसे, गेहूं के भूसे, बैगेज और धूल की धूल) से इथेनॉल उत्पादन के सैद्धांतिक अनुमान शुष्क पदार्थ के 382 से 471 एल टी -1 में भिन्न होते हैं। तेज़ी से पायरोलिसिस की प्रक्रिया द्वारा फसल अवशेषों से जैव-तेल का उत्पादन किया जा सकता है, जिसके लिए बायोमास के तापमान को कुछ सेकंड के भीतर 400-500 ओसी तक बढ़ाया जाना चाहिए, जिसके परिणामस्वरूप थर्मल विघटन प्रक्रिया में उल्लेखनीय परिवर्तन हो सकता है। बायोमास के लगभग 75% सूखे वज़न को संघननीय वाष्प में परिवर्तित किया जाता है। यदि कंडेनसेट को कुछ सेकंड के भीतर जल्दी ठंडा किया जाता है, तो यह आमतौर पर जैव-तेल नामक एक गहरा भूरा चिपचिपा तरल पैदा करता है। जैव-तेल का कैलोरीफुल मूल्य 16-20 एमजे किलो -1 है।

5. बायो-मेथनेशन : बायो-मेथनेशन की प्रक्रिया उच्च गुणवत्ता वाली ईंधन गैस निकालने और मिट्टी में पुनर्नवीनीकरण के लिए खपत का उत्पादन करने के लिए एक विनाशकारी तरीके से फसल अवशेषों का उपयोग करती है। चावल के भूसे जैसे बायोमास को बायोगैस में परिवर्तित किया जा सकता है, कार्बन डाइऑक्साइड और मीथेन का मिश्रण, जिसे ईंधन के रूप में उपयोग किया जा सकता है। 55-60% मीथेन के साथ 300 एम 3 के बायोगैस सूखे चावल के भूसे के प्रति टन प्राप्त किए जा सकते हैं। प्रक्रिया अच्छी गुणवत्ता वाले स्लरी को भी उत्पन्न करती है, जिसे खाद के रूप में उपयोग किया जा सकता है।

6. गैसीफिकेशन : गैसीफिकेशन एक थर्मो-रासायनिक प्रक्रिया है जिसमें फसल अवशेषों के आंशिक दहन के कारण गैस बनती है। बिजली उत्पादन के लिए बायोमास गैसीफिकेशन में मुख्य समस्या अशुद्धियों को हटाने के लिए गैस का शुद्धिकरण है। 'उत्पादक गैस' पीढ़ी के लिए गैसीफायर में फसल अवशेषों का उपयोग किया जा सकता है। कुछ राज्यों में, 'उत्पादक गैस' की पीढ़ी के लिए 1 मेगावाट से अधिक क्षमता के गैसीफायर स्थापित किए गए हैं, जिन्हें बिजली उत्पादन के लिए वैकल्पिक उपकरणों के साथ इंजन में खिलाया जाता है। बायोमास का एक टन बिजली के 300 किलोवाट उत्पादन कर सकता है। गैलेटिफिकेशन तकनीक को गोलियों और ब्रिकेट के रूप में फसल अवशेषों के उपयोग के लिए सफलतापूर्वक नियोजित किया जा सकता है। उत्पन्न 'उत्पादक गैस' जैव-फिल्टर का उपयोग करके साफ किया जाता है और बिजली उत्पादन के लिए विशेष रूप से डिज़ाइन किए गए गैस इंजनों में उपयोग किया जाता है। सेंट्रल इंस्टीट्यूट ऑफ एग्रीकल्चरल इंजीनियरिंग (सीआईएई), भोपाल ने बायोमास से उत्पन्न 'निर्माता गैस' पर चल रहे एक बिजली संयंत्र का विकास किया है।

7. बायोचर उत्पादन : बायोचर बायोमास के धीमी एन पायरोलिसिस (ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में हीटिंग) के माध्यम से उत्पादित एक उच्च कार्बन सामग्री है। यह एक बढ़िया लकड़ी का कोयला है और संभवत: मिट्टी में कार्बन के दीर्घकालिक भंडारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है, यानी सी अनुक्रमण और जीएचजी शमन। हालांकि, प्रौद्योगिकी के वर्तमान स्तर के साथ, यह आर्थिक रूप से व्यवहार्य नहीं है और किसानों के बीच लोकप्रिय नहीं किया जा सकता है। हालांकि, एक बार सभी मूल्यवान उत्पादों और सह-उत्पादों जैसे गर्मी ऊर्जा, एच 2 और जैव-तेल जैसी गैस को पकड़ा जाता है और बायोचर उत्पादन प्रक्रिया में उपयोग किया जाता है, यह आर्थिक रूप से व्यवहार्य हो जाएगा। अधिशेष फसल अवशेषों का उपयोग करने के लिए जैवचर की पीढ़ी के लिए कम लागत वाले पायरोलिसिस भट्ठी विकसित करने की आवश्यकता है, जो अन्यथा खेतों में जला दिया जाता है।

फसल अवशेष प्रबंधन रणनीतियां

पिछले पांच दशकों में भारतीय कृषि ने महत्वपूर्ण प्रगति की है। हालांकि, पिछले कुछ सालों से इसे शुद्ध बोए गए क्षेत्र को स्थिर करने, प्रति व्यक्ति भूमि उपलब्धता में कमी, जलवायु परिवर्तन प्रभाव और भूमि की गुणवत्ता में गिरावट के साथ विभिन्न चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। कृषि भूमि के क्षरण का मूल कारण इसकी कम मिट्टी-कार्बन सामग्री है जो कई महत्वपूर्ण मिट्टी-मध्यस्थ पारिस्थितिक तंत्र कार्यों को बाधित करता है। संरक्षण कृषि के साथ फसल अवशेषों का प्रबंधन भारतीय कृषि की दीर्घकालिक स्थायित्व के लिए महत्वपूर्ण है। इसलिए, अवशेषों को जलाने और मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार के लिए संरक्षण कृषि के लिए लाभप्रद रूप से उपयोग किया जाना चाहिए, पर्यावरण प्रदूषण को कम करना। क्षेत्र जहां पशु फीड और अन्य उपयोगी उद्देश्यों के लिए फसल अवशेषों का उपयोग किया जाता है, कुछ अवशेषों को मिट्टी में पुनर्नवीनीकरण किया जाना चाहिए। संरक्षण कृषि में फसल अवशेषों के कुशल उपयोग के लिए कई तकनीकें उपलब्ध हैं। हालांकि, उन्हें संसाधन गरीब और कम कुशल किसानों द्वारा बड़ी बिक्री गोद लेने के लिए पर्याप्त सुधार की आवश्यकता है। निम्नलिखित तीन मुख्य अंतर-जुड़े सिद्धांतों के साथ संरक्षण कृषि, फसल अवशेष प्रबंधन के लिए एक व्यवहार्य विकल्प है :

- मिट्टी कार्बनिक पदार्थ सामग्री और मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार के लिए सीधे मिट्टी की गड़बड़ी और बीजिंग को बिना मिट्टी के मिट्टी में कम करना।
- कवर फसलों और/या फसल अवशेषों का उपयोग करके मिट्टी पर कार्बनिक पदार्थ कवर को बढ़ाने। यह मिट्टी की सतह की रक्षा करता है, पानी और पोषक तत्वों को संरक्षित करता है, मिट्टी जैविक गतिविधि को

बढ़ावा देता है और एकीकृत कीट प्रबंधन में योगदान देता है।

- प्रणाली लचीलापन को बढ़ाने के लिए संघों, अनुक्रमों और घूर्णन में फसलों का विविधीकरण।

संरक्षण कृषि आधारित संसाधन संरक्षण प्रौद्योगिकियों (आरसीटी) जिनमें लेज़र सहायक परिशुद्धता भूमि स्तर, शून्य/कम टिलेज, बीज की सीधी ड्रिलिंग, चावल की सीधी बीजिंग, चावल के बिना चिपकने वाले यांत्रिक प्रत्यारोपण, उठाए गए बिस्तर रोपण और फसल विविधीकरण शामिल हैं। अवशेष प्रबंधन में नवाचारों के साथ आरसीटी स्ट्रॉ जलने से बचते हैं, मिट्टी कार्बनिक सी में सुधार करते हैं, इनपुट दक्षता में वृद्धि करते हैं और जीएचजी उत्सर्जन को कम करने की क्षमता रखते हैं। फसल अवशेषों के पुनर्चक्रण (रीसाइक्लिंग) के साथ स्थायी फसल कवर संरक्षण कृषि का एक पूर्व-आवश्यक और अभिन्न अंग है। हालांकि, पिछले फसल के अवशेषों की उपस्थिति में एक फसल की बुवाई एक समस्या है। लेकिन सतह-अवशेषों की उपस्थिति में बीज के प्रत्यक्ष ड्रिलिंग के लिए हैप्पी सीडर, टर्बो सीडर और रोटरी-डिस्क ड्रिल जैसे शून्य-बीज-सह-उर्वरक ड्रिल/प्लांटर्स के नए रूप विकसित किए गए हैं। ये मशीन नमी और पोषक तत्वों के संरक्षण के साथ-साथ मिट्टी के तापमान को नियंत्रित करने के अलावा खरपतवारों को नियंत्रित करने के लिए फसल अवशेषों के प्रबंधन के लिए बहुत उपयोगी हैं। क्षेत्रों में, पूर्वी भारत उदाहरण के लिए, जहां फसल अवशेषों में जानवरों की फीड, छत की खुजली और घरेलू ईंधन के रूप में प्रतिस्पर्धात्मक उपयोग होता है, कम से कम कुछ हिस्सों की मिट्टी कार्बनिक सी में योगदान देने के लिए खेतों में छोड़ी जानी चाहिए।

फसल अवशेषों के उपयोग के लिए निम्नलिखित बिंदु ध्यान में रखें

- प्रबंधन रणनीतियों के विकास के लिए विभिन्न फसलों, उनकी गुणवत्ता, उपयोग और खेती पर जलाया गया कुल उत्पादन सहित क्षेत्र-विशिष्ट फसल अवशेषों की सूची का विकास। सैटेलाइट इमेजरी का इस्तेमाल खेतों में जलाए गए अवशेषों की मात्रा का अनुमान लगाने के लिए किया जाना चाहिए।
- विभिन्न फसल अवशेषों की गुणवत्ता और कृषि के खेतों और खेतों के प्रयोजनों के लिए उनकी उपयुक्तता का आकलन करना।
- फसल विकास,मिट्टी के गुण, फसल उपज और कृषि आय पर संरक्षण कृषि के प्रभाव की भविष्यवाणी के लिए सिमुलेशन मॉडल विकसित करना।
- इन-सीटू निगमन के लिए अवशेषों की अपघटन दर में वृद्धि।
- जलन और अन्य प्रतिस्पर्धी उपयोगों द्वारा फसल अवशेषों का निपटान करने के पारंपरिक तरीके के साथ अवशेष-आधारित संरक्षण कृषि के जीवन चक्र का आकलन करना।

लाभ का विश्लेषण :

- फसल अवशेषों के ऑफ-ऑन-फार्म उपयोगों की लागत, सामाजिक-आर्थिक प्रभाव और तकनीकी व्यवहार्यता।
- अवशेषों का अनुकूलन करना जो फसल पशुधन प्रणाली को प्रभावित किए बिना संरक्षण कृषि के लिए बनाए रखा जा सकता है, खासतौर से उन क्षेत्रों के लिए जहां अवशेष चारा का मुख्य स्रोत हैं।
- विभिन्न मिट्टी और जलवायु स्थितियों में अवशेष प्रतिधारण/निगमन की उपयुक्तता का आकलन करना।
- अगली फसल या रासायनिक और जैविक असंतुलन के लिए परिचालन समस्याओं के निर्माण के बिना फसल प्रणालियों, मिट्टी की विशेषताओं और जलवायु के आधार पर विभिन्न फसलों के अवशेषों की स्वीकार्य मात्रा को शामिल किया जा सकता है।
- लाभ का आकलन : लघु और दीर्घकालिक समय के पैमाने के लिए जलती हुई अवशेष के साथ संरक्षण कृषि में अवशेष प्रतिधारण/निगमन का लागत और पर्यावरणीय प्रभाव।
- संग्रह, मात्रा में कमी, परिवहन और फसल अवशेषों के आवेदन, और मिट्टी की सतह पर अवशेषों की एक परत के तहत सफल फसल की बुवाई की सुविधा के लिए उपयुक्त कृषि मशीनरी का विकास।
- क्षेत्र से फसल अवशेषों को इकट्ठा करने और निकालने के लिए गठबंधन हारवेस्टर को संशोधित करना। ट्विन कटर बार प्रकार अनाज की वसूली के लिए फसल के शीर्ष हिस्से की कटाई के लिए हारवेस्टर गठबंधन और एक उचित ऊंचाई पर स्ट्रॉ कटाई के लिए कम कटर बार और स्ट्रॉ के उचित प्रबंधन के लिए विंड्रोइंग विकसित किया जाना चाहिए।
- प्रत्येक राज्य के लिए स्पष्ट रूप से विभिन्न प्रतियोगी उपयोगों को परिभाषित करने के लिए एक फसल अवशेष प्रबंधन नीति का विकास करना।
- प्रोत्साहन और दंड के माध्यम से खेती की फसल अवशेषों की रोकथाम और निगरानी पर उचित कानून का विकास और कार्यान्वयन।
- सब्सिडी दरों पर संरक्षण कृषि के लिए मशीनरी की आपूर्ति, कस्टम भर्ती प्रणाली को बढ़ावा देना और उपकरणों की खरीद के लिए सॉफ्ट लोन प्रदान करना।
- कार्बन अनुक्रमण और जीएचजी शमन के लिए संरक्षण कृषि का पालन करने वाले किसानों को लाभ पहुंचाने के लिए सी-क्रेडिट योजनाएं पेश करना।
- संशोधन के रूप में फसल अवशेषों को वर्गीकृत करना (जैसे नींबू या जिप्सम) और कृषि में उनके उपयोग को किसी अन्य खनिज उर्वरक या संशोधन की तरह सब्सिडी आकर्षित करना चाहिए।
- फसल अवशेषों की प्रतिधारण/जलने और मिट्टी के स्वास्थ्य पर इसके प्रभाव की उचित निगरानी के लिए मिट्टी स्वास्थ्य कार्ड में संरक्षण कृषि का घटक शामिल करना। ◆

आवश्यक सूचना

''**हरियाणा खेती**'' मासिक पत्रिका के सदस्यों को सूचित किया जाता है कि हम उन्हें उनकी पत्रिका नियमित रूप से भेज रहे हैं, अगर फिर भी किसी सदस्य को उसकी पत्रिका नहीं मिल रही है तो अपने क्षेत्र के डाकिया (पोस्टमैन) से सम्पर्क करें। अगर फिर भी पत्रिका नहीं मिलती है तो आप हमारे कार्यालय में आकर अपने हाथ से पत्रिका को पोस्ट करके अपनी तसल्ली करें।

- सह-निदेशक (प्रकाशन)

धान अवशेष जलाने से मिट्टी एवं मानव स्वास्थ्य पर असर

✍ सूबेसिंह[1], अनिल कुमार मलिक[2] एवं भरत सिंह
विस्तार शिक्षा विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

धान अवशेष जलाने को मुख्य रूप से अवशेष प्रबंधन की चुनौती के रूप में देखा गया है। हरियाणा और पंजाब राज्यों में इसके कुप्रबंधन ने दिल्ली और उत्तरी भारत के अन्य स्थानों में सालाना शीतकालीन धुआं और स्वास्थ्य समस्याओं का नेतृत्व किया है। पंजाब और हरियाणा आज देश में फसल अवशेषों को सबसे ज़्यादा मात्रा में जलाते हैं। क्रमश: करीब 20 मिलियन टन और 10 मिलियन टन। इसके अलावा राजस्थान, उत्तर प्रदेश, पाकिस्तानी पंजाब तथा दक्षिणी नेपाल के किसानों में भी यह रुझान पाया जाता है। हालांकि, यह व्यापक अभ्यास मिट्टी के स्वास्थ्य पर भी बुरा प्रभाव डालता है ।

औद्योगीकृत कृषि के मुख्यधारा के परिणाम स्वरूप नियमित आवर्तन के क्षेत्र में केवल धान और गेहूं की फसलों को बढ़ाने के अभ्यास का भारी विस्तार हुआ है। एक हाइब्रिड किस्म की शुरूआत ने खरीफ सीज़न, अप्रैल बुवाई और अक्तूबर/नवंबर की फसल में धान की खेती की सुविधा प्रदान की। इसके अलावा, ट्यूबवेल सिंचाई ने अप्रतिबंधित पानी की आपूर्ति प्रदान की और श्रम की कमी और लागत बढ़ने से फसलों की कटाई के लिए कंबाइंड हार्वेस्टर को व्यापक रूप से अपनाना पड़ा।

हालांकि, मशीनीकृत कटाई के परिणाम स्वरूप खेत में बड़ी मात्रा में फसल अवशेष रह जाते हैं। धान की कटाई के बाद गेहूं की फसल की समय पर बुवाई की आवश्यकता किसानों के लिए मैन्युअल रूप से अवशेष काटने और गेहूं की बुवाई के लिए खेत तैयार करने के लिए लगभग 15.20 दिन का बहुत कम समय होता है। श्रम की कमी भी प्रक्रिया को असंभव बनाती है। इस प्रकार किसान अपने खेत में फसल अवशेषों को आग के हवाले कर देते हैं क्योंकि वे इसे अन्य प्रस्तावित विकल्पों की तुलना में अवशेषों को साफ़ करने के लिए सबसे तेज़ और सबसे कम लागत वाले प्रभावी तरीके के रूप में देखते हैं।

मिट्टी की सेहत और मानव स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव

धान अवशेष जलाने से भूमि को क्षति पहुंचती है व आसपास के वातावरण का तापमान बहुत बढ़ जाता है तथा पानी सूख जाने के कारण फसल के लिए पानी की आवश्यकता भी बढ़ जाती है। खेतों में मौजूद भूमिगत 'कृषि मित्र कीट तथा अन्य सूक्ष्म मित्र जीव आग की तपिश से मर जाते हैं और शत्रु कीटों का प्रकोप बढ़ जाने के कारण फसलों को तरह-तरह की बीमारियां घेर लेती हैं। इसके परिणामस्वरूप भूमि की उर्वरता कम हो जाती है तथा पैदावार घट जाती है।

अमरीका की कैलीफोर्निया यूनिवर्सिटी के वैज्ञानिकों ने भी एक अध्ययन के बाद कहा था कि "भारत में वायु प्रदूषण के चलते अन्न का उत्पादन बुरी तरह प्रभावित हो रहा है और यदि भारत वायु प्रदूषण का शिकार न हो तो इसका अन्न उत्पादन वर्तमान से 50 प्रतिशत अधिक हो सकता है।" एक टन धान अवशेष जलाने पर हवा में 3 किलो कार्बन कण, 60 किलो कार्बन मोनोऑक्साइड, 1500 किलो कार्बन डाईऑक्साइड, 200 किलो राख और 2 किलो सल्फर डाईआक्सॉइड फैलते हैं। इससे वायुमंडल में कार्बन डाईऑक्साइड और मिथेन गैसों की मात्रा बहुत बढ़ जाती है। स्वास्थ्य के लिए यह धुआं अत्यंत हानिकारक है। इससे वातावरण बुरी तरह प्रदूषित होता है तथा लोगों की त्वचा व सांस संबंधी तकलीफें बढ़ जाती हैं।

विषैले धुएं के कारण वायुमंडल में चारों ओर गहरा धुंधलका छा जाता है और दृश्यता कम हो जाने के कारण बड़ी संख्या में वाहन दुर्घटनाओं के अलावा कई बार किसान और उनके परिजन अपनी ही लगाई पराली की आग की लपेट में आ कर मौत के मुंह में चले जाते या घायल हो जाते हैं। इस समय दिल्ली तथा देश के अनेक भागों में फैली धुंध उत्तर एवं उत्तर पश्चिम भारत में कृषि अपशिष्ट (एग्रीकल्चरल वेस्ट) को खेतों में जलाने का ही परिणाम है।

स्वीडिश मौसम विज्ञानी 'स्वांते बोदिन' ने पैरिस में जलवायु सम्मेलन के अवसर पर एक पत्रकार से साक्षात्कार में कहा कि "पिछले 10-15 वर्षों के दौरान कृषि अपशिष्ट पदार्थों को जलाने के रुझान में अत्यधिक वृद्धि हुई है। हिमालय क्षेत्र के तापमान में वृद्धि के परिणामस्वरूप ग्लेशियरों के पिघलने से इसका किसी सीमा तक निश्चित रूप से संबंध है।" श्री बोदिन के अनुसार अगली फसल के लिए खेत को खाली करने की किसानों की जल्दबाजी तो ठीक है परन्तु इसका यही सबसे तेज़ तरीका नहीं है। अत: इसके लिए यदि वे अन्य वैकल्पिक तरीके अपनाएं तो अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं। मिसाल के तौर पर वे सीधी बिजाई (direct seeding) का तरीका अपना सकते हैं। इसमें पिछली फसल की खड़ी पराली के बीच ही अगली फसल की बुवाई की जाती है और सूखी हुई खड़ी फसल धीरे-धीरे खाद में बदल जाती है। पराली को जला कर नुकसान उठाने की बजाय इसे खेत में अपघटित (डीकम्पोज़) करके बेहतरीन खाद बनाई जा सकती है। पराली गल कर भूमि की जैविक क्षमता और उर्वरक तत्वों में वृद्धि करती है।

अत: आवश्यकता है किसानों को न सिर्फ धान अवशेष जलाने की बजाय इसके लाभदायक इस्तेमाल के बारे में जागरूक किया जाए बल्कि इसे खेतों में जलाने पर प्रतिबंध लगाया जाए और इसका उल्लंघन करने वालों के विरुद्ध कार्रवाई की जाए ताकि दूसरे किसानों तक संदेश पहुंचे। ऐसा करके पर्यावरण प्रदूषण से बचाव के साथ-साथ फसल के झाड़ में कमी, धुंध के कारण होने वाली दुर्घटनाओं और आसपास के खेतों में खड़ी फसल को आग लगने के खतरे के अलावा ग्लेशियरों के पिघलने के खतरे को भी किसी सीमा तक रोका जा सकेगा। ◆

[1]विस्तार शिक्षा निदेशालय, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार।
[2]शोध छात्र, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार।

लेखकों से अनुरोध

हरियाणा खेती के लिए लेख कृपया टाईप करवा कर भेजें अन्यथा लेख स्वीकार नहीं किए जाएंगे। कृपया अपने विभाग का नाम अवश्य लिखें। लेख में अंग्रज़ी शब्दों का प्रयोग न करें। टाईपिंग के लिए **कृति देव फोन्ट का ही प्रयोग करें**। अपना लेख हमें ई-मेल पर भी भेज सकते हैं : **haryanakhetihau@gmail.com**

बारानी खेती में जोखिम कम करने का सर्वोत्तम उपाय : जैविक खेती

✍ **भरत सिंह घनघस, प्रदीप कुमार चहल एवं सूबे सिंह**
विस्तार शिक्षा विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

हरियाणा प्रांत के लगभग 20 प्रतिशत भू-भाग पर बारानी खेती की जाती है जो पूर्णत: वर्षा पर आधारित है, इसमें हरियाणा के दक्षिण-पश्चिमी ज़िले जिनमें हिसार, भिवानी, चरखी दादरी, महेन्द्रगढ़, रेवाड़ी, गुरुग्राम, मेवात, झज्जर, सिरसा, फतेहाबाद इत्यादि शामिल हैं। कम एवं अनिश्चित वर्षा इसकी मुख्य जलवायु विशेषता है तथा जलवायु परिवर्तन भी कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता को बहुत ज़्यादा प्रभावित कर रहा है जिसमें बिजाई का समय, क्षेत्र, फसल जमाव इत्यादि के साथ अनेक तरह के कीट-बीमारियां एवं अन्य प्राकृतिक तनाव आदि जोखिम शामिल हैं। इन परिस्थितियों में पशु एवं कृषि अवशेष से बने अनेक जैविक उत्पाद जैसे बीजामृत, जीवामृत, कम्पोस्ट, वर्मीकम्पोस्ट, वर्मीवॉश, दशपर्णी इत्यादि अच्छा फसल जमाव, जल संरक्षण एवं फसल को संतुलित पोषण के साथ-साथ पर्यावरण मित्र कीट नियंत्रण न केवल खेती लागत को कम कर, सुनिश्चित उत्पादन के साथ-साथ बाज़ार की बढ़ती जैविक उत्पाद मांग खेती को लाभकारी व्यवसाय बनाने में मदद करती हैं।

जैविक खेती : स्थानीय रूप से उपलब्ध जैविक व प्राकृतिक अवशेष जैसे अपशिष्ट, फसल अवशेष, वर्षा जल इत्यादि के सदुपयोग व रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक, खरपतवारनाशक आदि का प्रयोग पूर्णत: वर्जित, प्रकृति मित्र तकनीकों से फसल का पोषण व रक्षण प्रबन्धन करने को जैविक खेती कहते हैं। इसमें जैविक खाद, जैविक कीट नियंत्रक, फसल चक्र मल्चिंग, आदि का प्रयोग किया जाता है। जैविक खेती में भूमि की उर्वरता को जैव विधियों जैसे जैविक खाद, हरी खाद, फसल चक्र आदि से निरंतर बनाए रखने के तरीके अपनाए जाते हैं तथा कीटनाशक गुणों वाले पौधों जैसे नीम, आक, धतूरा इत्यादि के उत्पादों एवं मित्र कीट, सूक्ष्म जीवों का प्रयोग कर रोग-कीटों का नियंत्रण किया जाता है।

जैविक खेती तकनीक : जैविक खेती में निम्न तकनीकों का समन्वित उपयोग आवश्यक है :

1. बारानी फसलें एवं फसल चक्र : इनमें खरीफ ऋतु में मुख्यत: बाजरा, ग्वार, मोठ, तिल व मसाले वाली एवं औषधीय फसलों का उत्पादन होता है जिसमें जीरा, ईसबगोल, ग्वारपाठा, अश्वगंधा आदि। इसी तरह रबी फसलें जैसे तारामीरा, सरसों, चना, जौ आदि फसल चक्र में दलहनी व तिलहनी फसलों को अवश्य शामिल करना चाहिए ताकि भूमि की उपजाऊ शक्ति बनी रहे। आजकल इन फसलों का जैविक विधि से उत्पादन प्रमाणित होने पर विश्व बाज़ार में बहुत मांग है तथा स्थानीय संसाधनों का सदुपयोग भी संभव होगा। इसके अतिरिक्त खेजड़ी, रोहिड़ा, महानीम इत्यादि वृक्षों का रोपण कर कृषिवानिकी को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

2. पोषण प्रबंधन : शुष्क क्षेत्रों में खाद तैयार करने के लिए 5-6 माह का समय मिल जाता है वहां पशु मल एवं अवशेष से ज़मीन में गड्ढे में खाद बनाना उचित रहता है। कम्पोस्ट खाद बनाने की इन्दौर विधि का परिवर्तित रूप प्रयोग में लाया जाता है जिसमें एक मीटर गहरा व दो मीटर चौड़ा गड्ढा या खाई जिसकी लम्बाई आवश्यकता व सुविधा अनुरूप रखते हैं। गड्ढे के तल को कंक्रीट से पक्का कर देते हैं। गड्ढा ऐसे स्थान पर बनाया जाए जहां बरसात का पानी न भरता हो और पेड़ों की छाया रहती हो। अगर स्थान ऊंचा न हो तो खुदाई से निकली मिट्टी की गड्ढे के चारों ओर मेड़ बना देनी चाहिए व छाया के लिए चारों ओर अरण्डी जैसी शीघ्र बढ़ने वाली झाड़ियां लगा देनी चाहिएं। गड्ढे का आकार, उपलब्ध गोबर, फसल अवशेष के अनुसार इतना बनाना चाहिए ताकि यह 5-7 दिन में भर जाए। इसी प्रकार कई गड्ढे बनाने चाहिएं। खाद निर्माण सामग्री के लिए विशेष सावधानियां :

- सामग्री में जितनी विविधता होगी उतनी ही खाद गुणवत्ता अच्छी होगी जैसे विभिन्न फसलों के अवशेष, खरपतवार, पत्ते, गोबर आदि सभी का प्रयोग करें। फसल अवशेष के शीघ्र विघटन के लिए उन्हें 5-7 सैं.मी. के टुकड़ों में काटें।
- **कार्बन :** नाइट्रोजन अनुपात सही रखने के लिए पत्तियों का प्रयोग अधिक करना चाहिए। साथ ही नीम, आक आदि की पत्तियों और कोमल शाखाओं का उपयोग अवश्य करना चाहिए।
- उपर्युक्त कचरे, गोबर (गीला) व मिट्टी (गाय मूत्र युक्त उपलब्ध हो तो अच्छा) को 70:20:10 के अनुपात में मिलाकर/परत बनाकर गड्ढे को भरना चाहिए और बाद में गीली मिट्टी का परत लेपकर ढक देना चाहिए।
- गर्मियों में 10-15 दिन बाद व सर्दियों में 20-30 दिन बाद एक बार उपर्युक्त मिश्रण को उलट-पलट करना चाहिए और पुन: मिट्टी से ढक दें।

खाद तैयार होने पर इसका रंग गहरा भूरा हो जाता है तथा दुर्गन्ध समाप्त हो जाती है। सम्पूर्ण मिश्रण चाय की पत्ती जैसे पदार्थ में तबदील हो जाता है। तैयार खाद को गड्ढे से निकालकर इसमें ट्राइकोडर्मा फफूंद 10 किलो प्रति टन खाद में मिलाकर 5-6 दिन तक छाया में रखते हैं तथा बुवाई से 7-10 दिन पूर्व खेत में मिला दें। बारानी फसलों में 5-6 टन खाद प्रति हैक्टेयर प्रति वर्ष प्रयोग करना ठीक रहता है। इसका प्रयोग न केवल संतुलित पोषण प्रदान करता है अपितु भूमि की जलधारण क्षमता भी बढ़ती है। इसके अतिरिक्त भूमि की उर्वराशक्ति को बनाए रखने के लिए अन्य जैविक उत्पाद जैसे :

- **जीवामृत :** 200 लीटर के ड्रम में 170 लीटर पानी लेकर उसमें 10 दिन पुराना 10 किलो गाय का गोबर डालें, 5 लीटर गाय का मूत्र, 2 किलो बेसन का आटा, 2 किलो गुड़ तथा 250 ग्राम बरगद के पेड़ के नीचे की मिट्टी डालकर घोल को अच्छी तरह मिलाएं तथा 72 घंटे के लिए बोरी से ढक कर रख दें तथा सुबह-शाम अच्छी तरह हिलाएं। यह तैयार घोल 3-15 दिन के अंदर प्रयोग करें जो भूमि की उपजाऊ शक्ति को बढ़ाने के साथ-साथ पोषक तत्वों की प्रयोगात्मक रूप में उपलब्धता भी बढ़ाता है।
- **पंचगव्य :** एक मटके में गाय का गोबर (10 दिन पुराना), गौमूत्र, गाय का दूध, दही, गुड़ व गाय घी को क्रमश: 5:3:2:2:1 के अनुपात में अच्छी तरह से मिलाएं तथा बोरी या कपड़े से ढक कर 3 दिन के लिए रखें। इसके बाद 15 दिन तक सुबह व शाम को हिलाएं। यह 17 दिन बाद प्रयोग करने के लिए तैयार हो जाता है। कपड़े द्वारा छान कर 1:5 के अनुपान में 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव के लिए फसलों पर प्रयोग करना चाहिए। इनके अतिरिक्त मटका खाद, कम्पोस्ट चाय, वर्मीवॉश इत्यादि का प्रयोग सीमांत किसान भी कर सकते हैं।

खरपतवार नियंत्रण : इसके लिए किसान पकी हुई खाद व साफ बीज के प्रयोग के साथ-साथ, इनका खेत में उगने पर हाथ से उखाड़कर फसल की पंक्तियों में मल्च के रूप में प्रयोग करें। यदि अत्यधिक आवश्यकता हो तो जैविक खरपतवारनाशकों का प्रयोग जैसे आलडाउन, कार्म ग्लूटेनमिल, हर्बि साईडल सोप, एक्सप्रेस इत्यादि का विशेषज्ञ की सलाह से करें।

रोग कीट नियंत्रण : निम्न उपायों का समन्वित प्रयोग करना चाहिए :

- स्वस्थ, रोग कीट रहित बीज का चयन कर बीजामृत से उपचार या 4-6 ग्राम ट्राईकोडर्मा पाऊडर से प्रति किलो बीज उपचार बाद बिजाई करें।
- अच्छी पक्की हुई जैविक खाद का प्रयोग 1-2 टन प्रति एकड़ की दर से भूमि तैयारी के समय करना चाहिए।
- नीम की पकी हुई निम्बोली को पानी में भिगोकर उसका छिलका

(शेष पृष्ठ 28 पर)

[1]विस्तार शिक्षा निदेशालय, चौ.च.सिं.ह.कृ.वि., हिसार।

फसल अवशेष प्रबन्धन व लाभ : किसान के काम की बात

✍ **यशपाल सिंह[1] एवं बलराज सिंह दूहन**
मृदा विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

धान, गेहूं व गन्ना फसलों से प्राप्त फसल अवशेषों को हरियाणा व पंजाब प्रदेश में प्रतिवर्ष क्रमश: लगभग 9 मिलियन टन व 19.6 मिलियन टन मात्रा को जला दिया जाता है। जिससे हमें भिन्न-भिन्न तरीकों के नुकसान होते हैं जिसमें मुख्य रूप से मानव जीवन, मृदा उर्वरता ह्रास से लेकर पर्यावरण तक बहुत से हानिकारक प्रभाव हैं, जिनसे हमारा समाज अनभिज्ञ है। जिसे हमें गम्भीरता से लेना होगा और इससे होने वाले नुकसान से समाज को जागरूक कराना होगा।

कुछ आकंडों द्वारा दिए गए विवरण से हमें ज्ञात होगा कि अकेले धान की फसल के अवशेषों को जलाने से प्रतिवर्ष हमें कितना नुकसान, मात्र पोषक तत्वों के रूप में ही हो रहा है।

आंकडों के हिसाब से अकेले हरियाणा में प्रतिवर्ष अनुमानित 23,65,000 यूरिया के बोरों में मिलने वाली नाइट्रोजन के बराबर मात्रा फसल अवशेष जलाने से समाप्त हो जाती है, इससे हमें पता चलता है कि इन फसल अवशेषों को जलाने के बजाय यदि खेतों में ही गला सड़ा दें तो इससे हमारी मृदा में सीधे रूप से पोषक तत्वों की मात्रा भी अच्छी बनी रहेगी, यदि दूसरे रूप में कहें तो हमारी मृदा की उर्वरता में बढ़ोत्तरी होगी। जिसका लाभ हमारी अगली फसलों की पैदावार के ऊपर भी होगा तथा अगली फसलों में देने वाले उर्वरकों की मात्रा में भी कमी लाई जा सकती है।

फसल अवशेषों को जलाने से होने वाले नुकसान :

यह कहने में अतिश्योक्ति नहीं होगी कि इससे होने वाले नुकसानों को गिनाया नहीं जा सकता है लेकिन फिर भी फसल अवशेषों को जलाने से होने वाले कुछ मुख्य नुकसानों पर प्रकाश डाला गया है। जो निम्नलिखित हैं:

◆ **मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव :** फसल अवशेष को जलाने पर निकलने वाली गैसों से वातावरण में स्मॉग पैदा हो जाता है जोकि श्वास संबंधित समस्याओं को पैदा करता है तथा श्वास लेने में बाधा उत्पन्न करता है।

◆ **वातावरण पर प्रभाव :** अवशेष जलाने के उपरान्त निकलने वाली गैसों में ग्रीन हाऊस प्रभाव वाली गैसों व पर्टीकुलेट मैटर की मात्रा भी होती है जो कि ग्लोबल वार्मिंग में सहयोग करके हमारे वातावरण को दूषित करते हैं।

◆ **मृदा उर्वरता ह्रास :** फसल अवशेषों को जलाने से मृदा की उर्वरता का ह्रास होता है, साथ ही मृदा की ऊपरी परत से लाभकारी जीवों की संख्या में भी भारी कमी देखी गई हैं एव परिणाम स्वरूप ऊपरी परत से पोषक तत्वों का कम होना भी चिंता का विषय है।

◆ **लाभदायक मृदा बैक्टीरिया ह्रास :** जिस खेत के अन्दर हम फसलों के अवशेषों को जलाते हैं वहाँ पाया गया है कि मृदा में उपस्थित लाभदायक बैक्टीरिया की मृत्यु दर में वृद्धि हो चुकी है और परिणामस्वरूप हमारी अगली फसलों की पैदावार कम होती है।

◆ **मृदा नमी ह्रास :** मृदा में नमी को शोषित करने की क्षमता होती है जोकि उसमें उपस्थित कार्बनिक पदार्थों की मात्रा पर निर्भर करती है। अत: मृदा में फसलों के अवशेषों को अधिक से अधिक वापस किया जाये तो मृदा में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा भी अच्छी बनी रहेगी और मृदा में नमी शोषण करने की क्षमता में वृद्धि होगी।

पोषक तत्व	पोषक तत्व हानि प्रतिटन फसल अवशेष के हिसाब से	हरियाणा पोषक तत्व हानि प्रतिवर्ष (मिलियन टन)	पंजाब पोषक तत्व हानि प्रतिवर्ष (मिलियन टन)
नाइट्रोजन	5.5 किलोग्राम	49.5	107.8
फॉस्फोरस	2.3 किलोग्राम	20.7	45.08
पोटाश	25 किलोग्राम	225	490
सल्फर	1.2 किलोग्राम	10.8	23.52
ऑर्गेनिक कार्बन	400 किलोग्राम	3600	7842

*National Policy for management of Crop residues के आंकडों पर आधारित

◆ **मृदा कठोरता एवं मृदा कटाव :** क्योंकि जिस मृदा के अन्दर कार्बनिक पदार्थों की मात्रा कम होती है तो वह मृदा प्राय: कठोर हो जाती है एवं ऐसी मृदा में कटाव भी अधिक होता है। जिससे हमारी खेती योग्य मृदा कमज़ोर हो जाती है।

◆ **मृदा की भौतिक दशा पर प्रभाव :** भिन्न-भिन्न प्रभावों को देखते हुए हमें ज्ञात होता है कि कितने तरीकों से मृदा की भौतिक संरचना पर फसल के अवशेषों को जलाने का असर होता है तथा भौतिक संरचना को बचाये रखने के लिए हमें इसकी कार्बनिक मात्रा को बनाये रखना होगा क्योंकि प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से मृदा की भौतिक, रासायनिक व जैविक क्रियाएं मृदा में उपस्थित कार्बनिक पदार्थ की मात्रा पर ही निर्भर करती हैं।

अब हमें इसके दूसरे पहलू की तरफ भी ध्यान आकर्षित करना होगा कि हमारे किसान किस प्रकार से फसल अवशेषों को जलाने के बजाय उसका एक अच्छा प्रबन्धन कर सकें और इसका लाभ उठा सकें।

फसल अवशेष प्रबन्धन :

◆ **फसल अवशेषों को मिट्टी में मिलाकर :** फसल अवशेष को मिट्टी में मिलाने के काम लाया जा सकता है एवं गला-सड़ा कर खाद के रूप में उपयोग किया जा सकता है जो कि मृदा की उपजाऊ शक्ति में बढोत्तरी करेगा।

◆ **ज़ीरो ड्रिल का प्रयोग :** ज़ीरो ड्रिल का प्रयोग करने से पिछली फसल के खड़े अवशेष में ही हम अगली फसल की बिजाई कर सकते हैं जिससे वे अवशेष गलने के बाद फसल में खाद का भी काम करते हैं और मृदा में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा में वृद्धि करते हैं।

◆ **मल्चिंग व कम्पोस्ट के रूप में प्रयोग :** इसका प्रयोग खड़ी फसल में मल्च के रूप में करके दोहरा फायदा लिया जा सकता है एक तरफ तो खरपतवार नियंत्रण होगा, नमी बनी रहेगी वहीं दूसरी तरफ गलने-सड़ने के बाद खाद का काम भी करेगा।

पशुओं के चारे के रूप में प्रयोग : किसान फसल अवशेषों के कुछ एक भाग को पशुओं के चारे के रूप में भी ले सकते हैं व उन भ्रांतियों को तोड़ना होगा कि पशुओं को इसे नहीं खिलाना चाहिए, क्योंकि एन.डी.आर.आई. करनाल द्वारा इसकी पुष्टि की जा चुकी है कि धान की पुआल को पशुओं के चारे में सम्मिलित किया जा सकता है। ◆

[1]ग्रासिम इण्डस्ट्रीज लिमिटेड -यूनिट इण्डोगल्फ फर्टिलाईज़र्स

हरित क्रांति-कृषोन्नति योजना का महत्व

✍ नीरू दूमरा
कीट विज्ञान विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

केंद्र सरकार द्वारा कृषि क्षेत्र को निरंतर प्राथमिकता दी जा रही है। इसी क्रम में वर्ष 2022 तक कृषकों की आय दोगुनी किए जाने का लक्ष्य भी तय किया गया है। प्रत्येक बजट में इस दिशा में आगे बढ़ने हेतु नए-नए प्रावधानों का भी समावेश किया जा रहा है। हाल ही में प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में मंत्रिमंडल की आर्थिक मामलों की समिति ने कृषि क्षेत्र में छतरी योजना 'हरित क्रांति-कृषोन्नति योजना' को 12वीं पंचवर्षीय योजना से आगे यानी 2017-18 से 2019-20 तक जारी रखने को अपनी स्वीकृति दे दी है। इसमें केंद्र सरकार का हिस्सा 33,269.976 करोड़ रुपये का रहेगा।

इस छतरी योजना में 11 अन्य उपयोजनाएं भी शामिल हैं। इस संपूर्ण मिशन का उद्देश्य समग्र और वैज्ञानिक तरीके से उत्पादन एवं उत्पादकता बढ़ाकर तथा उत्पाद पर बेहतर लाभ सुनिश्चित करके किसानों की आय बढ़ाना है। इनमें से प्रत्येक योजना का विशिष्ट उद्देश्य है और देश के वर्तमान कृषि परिदृश्य में कृषक आय बढ़ाने में निस्संदेह इनका महत्वपूर्ण योगदान होगा।

इन योजनाओं में सबसे प्रमुख है बागवानी के एकीकृत विकास के लिए मिशन (एमआईडीएच)। इसके कार्यान्वयन हेतु केंद्र सरकार की ओर से 7,533.04 करोड़ रुपये का योगदान किया जाएगा। योजना का उद्देश्य बागवानी उत्पादन बढ़ाकर, आहार सुरक्षा में सुधार करके तथा कृषि परिवारों को आय समर्थन देकर बागवानी क्षेत्र में समग्र विकास को प्रोत्साहन देना है। तिलहन और तेल पाम पर राष्ट्रीय मिशन सहित राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन का उद्देश्य देश के चिन्हित ज़िलों में उचित तरीके से क्षेत्र विस्तार और उत्पादकता बढ़ाकर चावल, गेहूं, दालें, मोटे अनाज तथा वाणिज्यिक फसलों का उत्पादन बढ़ाना है। इसी प्रकार सतत कृषि के लिए राष्ट्रीय मिशन का लक्ष्य विशेष कृषि पारिस्थितिकी में एकीकृत कृषि, उचित मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन और संसाधन संरक्षण प्रौद्योगिकी के समन्वयन से सतत कृषि को बढ़ावा देना है। कृषि विस्तार पर उपमिशन के जरिये राज्य सरकारों, स्थानीय निकायों आदि की जारी विस्तार व्यवस्था को मज़बूत बनाना, खाद्य एवं आहार सुरक्षा हासिल करना तथा किसानों का सामाजिक-आर्थिक सशक्तिकरण करना है।

कृषि मशीनीकरण पर उपमिशन के अंतर्गत छोटे और मंझौले किसानों तक कृषि मशीनीकरण पहुंच में करना और कस्टम हायरिंग सेंटरों को बढ़ावा दिया जाएगा। इसमें केंद्र सरकार की हिस्सेदारी 3,250 करोड़ रुपये की होगी। छतरी योजना के अंतर्गत सम्मिलित पौध संरक्षण और पौधों के अलगाव मिशन का उद्देश्य कीड़े-मकौड़ों, रोगों, अनचाहे पौधों, छोटे कीटाणुओं आदि से फसलों की सुरक्षा करना है। कृषि सहयोग पर एकीकृत योजना में केंद्र की भागीदारी 1,902 करोड़ रुपये की है और इसका लक्ष्य सहकारी समितियों की आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए वित्तीय सहायता उपलब्ध करना, क्षेत्रीय असंतुलन दूर करना, कृषि विपणन, प्रसंस्करण, भंडारण, कम्प्यूटरीकरण और कमज़ोर वर्गों के लिए कार्यक्रमों में सहकारी विकास में तेज़ी लाना है। कृषि विपणन पर एकीकृत योजना के लिए केंद्र द्वारा अपने हिस्से के 3,863.93 करोड़ रुपये प्रदान किए जाएंगे। इसका उद्देश्य कृषि विपणन संरचना विकसित करना, कृषि विपणन संरचना में नवीनतम प्रौद्योगिकी तथा स्पर्धी निकायों को प्रोत्साहित करना है।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि कृषि एवं सम क्षेत्रों के विकास की गति को बढ़ाने तथा किसानों के आर्थिक सशक्तिकरण में इन योजनाओं की महत्वपूर्ण भूमिका रहेगी। आगामी वर्षों में ज़मीनी स्तर पर इन योजनाओं एवं मिशनों के प्रभाव नज़र आने लगेंगे और उम्मीद करते हैं कि कृषक समुदाय के उत्थान में ये कार्यक्रम उत्प्रेरक की भूमिका निभाएंगे। ◆

गुणकारी तुलसी

✍ सरोज दहिया एवं सुमन
खाद्य एवं पोषण विभाग
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

तुलसी भारत में सबसे पवित्र जड़ी बूटी मानी जाती है। यह एक सुगंधित जड़ी बूटी है जिसे जड़ी बूटियों की रानी भी कहा जाता है। इसे भारत के हर हिस्से में उगाया जाता है। तुलसी का धार्मिक ही नहीं बल्कि औषधीय महत्व भी है। आयुर्वेद में तुलसी के पौधे के हर भाग को स्वास्थ्य के लिहाज से फायदेमंद बताया गया है। तुलसी का सामान्यत: पूरक रूप में या इसकी पत्तियों को सलाद, चाय और सूप इत्यादि में प्रयोग किया जाता है। इसकी पत्तियों को सुखाकर भी विभिन्न व्यंजनों में इस्तेमाल किया जा सकता है। इसका इस्तेमाल एशियाई खाने में किया जाता है।

तुलसी एक गुणकारी औषधि है। इसके गुणों की लाईन बहुत लम्बी है। इसका इस्तेमाल आयुर्वेद में हज़ारों वर्षों से विभिन्न प्रकार के रोगों को दूर करने में किया जाता है। इसमें अनके प्रकार के पोषक तत्व होते हैं जैसे: विटामिन ए, सी, के, खनिज लवण (कैल्शियम, मैग्नीशियम, आयरन, ज़िंक, मैंगनीज़ व तांबा), ओमेगा-3 फैट्स और फाइटोन्यूट्रियंट्स आदि। इसमें कई प्रकार के फाइटोकेमिकल्स जैसे- एल्कलाइड, सप्पोनीन, टैनिन, ग्लाइकोसाइड मौजूद होते हैं। यह सभी पोषक तत्व हमारे सम्पूर्ण स्वास्थ्य के लिए बहुत ही अच्छे हैं। इसमें अनेक प्रकार के जैविक रूप से सक्रिय यौगिक (Biologically active compounds) होते हैं जो विभिन्न रोगों को रोकने और स्वास्थ्य को बढ़ाने में उपयोगी हैं। इसमें एंटी-बैक्टीरियल, एंटी-बायोटिक, एंटी-सेप्टिक, एंटी-इन्फ्लेमेटरी, एंटी-आक्सीडेंट गुण होते हैं। इसका इस्तेमाल जुकाम, खांसी, बुखार, सरदर्द, पेटदर्द, गुर्दे की पत्थरी, तनाव, श्वसन संबंधी जैसे- अस्थमा, ब्रोंकाइटिस और फेफड़ों के संक्रमण, मुहं के स्वास्थ्य, चेहरे के लिए, त्वचा संक्रमण, आंखों के लिए तथा दिल की बीमारी में किया जाता है। तुलसी में रक्त शर्करा का स्तर नियंत्रित करने की क्षमता है। यह रक्त ग्लूकोज़ को कम कर सकती है, असामान्य लिपिड प्रोफाइल को सही कर सकती है, शरीर में कैंसर की कोशिकाओं को बढ़ने से रोकती है। यह शरीर की प्रतिरोधक क्षमता भी बढ़ाती है। ◆

(पृष्ठ 26 का शेष)

उतार देना चाहिए व गुठली को सुखाने के बाद कूटकर 60-80 किलो प्रति एकड़ की दर से जुताई के समय मृदा में मिलाना चाहिए।

- फसल में रस चूसक एवं अन्य कीटों के नियंत्रण के लिए दशपर्णी का प्रयोग 300-400 मि.ली. प्रति 15 लीटर पानी का प्रयोग छिड़काव द्वारा करना चाहिए। दशपर्णी का घोल तैयार करने के लिए 2 किलो गाय का गोबर, 5 किलो गौमूत्र, 2 किलो आक की पत्तियां, 2 किलो करंज की पत्तियां, 2 किलो बेल पत्र की पत्तियां, 2 किलो नीम की पत्तियां, 2 किलो तुलसी की पत्ती, 2 किलो सीता फल की पत्तियां, 2 किलो कनेर की पत्तियां, 2 किलो काला धतूरे की पत्तियां, 2 किलो पपीते की पत्तियां व 2 किलो बेशर्म की पत्तियां, 2 किलो पीली कनेर की पत्तियां सभी को अच्छी तरह कूट कर एक ड्रम में मिला दें तथा कपड़े से ढक कर एक दिन के लिए रखें। अगले दिन इसमें 500 ग्राम हल्दी, 500 ग्राम हरी मिर्च, 200 ग्राम अदरक बारीक, 500 ग्राम कुटी हुई लहसुन व 500 ग्राम पीसा हुआ तम्बाकू मिलाकर कपड़े से ढक दें, इस तरह से तैयार घोल 40 दिन के अंतर्गत ही उपयोग कर लेना चाहिए।
- खेत में कीट प्रजाति के अनुसार फेरोमोन ट्रैप का प्रयोग करना चाहिए।
- खेत का हर रोज़ कीट रोग निरीक्षण कर शुरुआत में नियंत्रण कर उपज हानि से बचाव किया जाना चाहिए। ◆

Climate Change : Effect on Agriculture

✍ **Ankush Sheoran[1], Ekta Arya[2] and Satyawan Arya**
Department of GPB, Forage Section
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Over the last decade, scientists have extensively studied the greenhouse effect, which holds that the accumulation of carbon dioxide (CO_2) and other greenhouse gases (GHG's) is expected to produce global warming and other significant climatic changes over the next century. The prospective climate change is global warming(with associated changes in hydrologic regimes and other climatic variables) induced by the increasing concentration of radiatively active greenhouse gases. Climate models project that global surface air temperatures may increase by 4.0–5.8°C in the next few decades. These increases in temperature will probably offset the likely benefits of increasing atmospheric concentrations of carbon dioxide on crop plants. Climate change would create new environmental conditions over space and time and in the intensity and frequency of weather and climate processes. Therefore, climate change has the potential to influence the productivity of agriculture significantly. Climate variability has also become a reality in India. The increase in mean temperature by 0.3–0.6°C per decade since the 1860s across India indicates significant warming due to climate change. This warming trend is comparable to global mean increases in temperature in the past 100 years. It is projected that rainfall patterns in India would change with the Western and Central areas witnessing as many as 15 more dry days each year, whereas the Northern and North-Western areas could have 5 to 10 more days of rainfall annually. Thus, dry areas are expected to get drier and wet areas wetter. It is projected that India's population could reach 1.4 billion by 2025 and may exceed China's in the 2040s.

To meet the demand for food from this increased population, the country's farmers need to produce 50% more grain by 2020. The problem has became acute because urbanization and industrialization have rapidly dwindled the per capita availability of arable land from 0.48 ha in 1950 to 0.15 ha by 2000 and is likely to further reduce to 0.08 ha by 2020. As against the national average of 40% of the total cropped area being irrigated, 60% of the total cropped area is still rainfed and dependent on uncertainties of monsoon. This shows the dependency of Indian agriculture on climate. Moreover, if certain climate change scenarios come to pass, agricultural production in some areas may decrease. How can productivity be increased while ensuring the sustainability of agriculture and the environment for future generations? Decision makers need information supplied by research to make informed choices about new agricultural technologies and to devise and implement policies to enhance food production and sustainability. There is now a great concern about decline in soil fertility, change in water table, rising salinity, resistance to many pesticides and degradation of irrigation water quality in north-western India. It is clear that over time more nutrients have been removed than added through the fertilizers and the farmers have to apply more fertilizers to get the same yield, they were getting with less fertilizers 20–30 years ago. Climate change will further affect soil conditions. Changes in temperature and in precipitation patterns and amount will influence soil water content, run-off and erosion, salinisation, bio-diversity, and organic carbon and nitrogen content. The increase in temperature would also leads to increased evapotranspiration. There is need to quantify the specific regional soil-related problems and that affect the global environmental change will have on soil fertility and its functioning for crop growth and production. There are two major crop growing season in India as for climate point of view. The summer or **kharif** crop growing season (June–September) coincides with South-West monsoon. The major **kharif** crops are rice, maize, sugarcane, cotton, jute, groundnut, soybean and Bajra etc. Depending on crop duration, **kharif** crops can be harvested during the autumn (October–November) or winter (December–February) months. The southwest monsoon is critical to the **kharif** crop, which accounts for more than 50% of the food-grain production and 65% of the oilseeds production in the country. Interannual monsoon rainfall variability in India leads to large-scale droughts and floods, resulting in a major effect on Indian food grain production and on the economy of the country. The winter or **rabi** crop-growing season starts after the summer monsoon and continues through to the following spring or early summer. Rainfall occurring at the end of the monsoon season provides stored soil moisture and often irrigation water for the **rabi** crop, which is shown in the post-monsoon season (October–November). The summer monsoon therefore, is responsible for both **kharif** and **rabi**

(contd. on page 32)

[1]Dept. of Chemistry, Panjab University, Chandigarh
[2]Dept. of Physics ,Guru Jambheshwar Univ. of Sci. & Tech., Hisar

Effect of Pesticide Residue in Foods on Human Health

✍ **Ankush Sheoran[1], Ekta Arya[2] and Sunita Sheoran**
Department of Soil Science
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

India is home to approximately 16% of the total world's population, but has just less than 2% of the total landmass. Rapid population growth, together with a high emphasis on achieving food grain self-sufficiency has compelled Indian farmers to resort to the substantial use of pesticides. The massive use of pesticides, which are hazardous chemicals designed to repel or kill rodents, fungi, insects and "weeds" that undermine intensive farming. Pesticides insure increased food production, a safe and secure food supply and other secondary benefits. However, many first-generation pesticides have been found to be harmful to the environment. Some of them can persist in soils and aquatic sediments, bio-concentrate in the tissues of invertebrates and vertebrates, move up trophic chains, and affect top predators.

All people are inevitably exposed to pesticides, via numerous pathways, including household use of pesticide products, dietary exposure to pesticide residues and exposure to agricultural drift. The general population is exposed to the residues of pesticides including physical and biological degradation products in air, water and food. Dietary exposure comes from residues in fruits, vegetables, and from contaminated meat, fish, rice and dairy products. Occupational exposure occurring at all stages of pesticide formulation, manufacture and application involves exposure to complex mixtures of different types of chemicals, active ingredients and by-products present in technical formulations such as impurities, solvents and other compounds produced during the storage procedure. Moreover, although inert ingredients have no pesticidal activity, they may be biologically active and sometimes the most toxic component of a pesticide formulation. Pesticides act selectively against certain organisms without adversely affecting others. Absolute selectivity, however, is difficult to achieve and most pesticides are a toxic risk also to humans. Pesticides are the most important method in self-poisoning in the developing world. Three million cases of pesticide poisoning, nearly 220,000 fatal, occur world-wide every year

Human exposure to pesticides is assessed by measuring the levels of pesticides in human samples such as breast milk, maternal blood and serum, urine and sometime umbilical cord blood. Improvements in analytical techniques have made it possible to detect pesticides and their metabolites at trace levels in almost all human samples. Pesticides act mainly by interfering with natural hormones because of their strong potential to bind to estrogen or androgen receptors. In particular, these can bind to and activate various hormone receptors and then mimic the natural hormone's action (agonist action). Pesticides may also bind to these receptors without activating them. This antagonist action blocks the receptors and inhibits their action. Finally, these may also interfere with the synthesis, transport, metabolism and elimination of hormones, thereby decreasing the concentration of natural hormones. For example, thyroid hormone production can be inhibited by some ten endocrine disruptor pesticides (amitrole, cyhalothrin, fipronil, ioxynil, maneb, mancozeb, pentachloronitro-benzene, prodiamine, pyrimethanil, thiazopyr, ziram, zineb).At the human level, endocrine pesticides have also been shown to disrupt reproductive and sexual development and these effects seem to depend on several factors, including gender, age, diet and occupation. Age is a particularly sensitive factor. Human foetuses, infants and children show greater susceptibility than adults. Much of the damage caused by pesticides occurs during gametogenesis and the early development of the foetus. However, the effects may not become apparent until adulthood. Moreover, foetuses and infants receive greater doses due to the mobilization of maternal fat reserves during pregnancyand breastfeeding. Infants are extremely vulnerable to pre and postnatal exposure to endocrine disruptor pesticides, resulting in a wide range of adverse health effects including possible long-term impacts on intellectual function and delayed effects on the central nervous system functioning. Likewise, residential proximity to agricultural activity is a factor often described to explain developmental abnormalities in epidemiological studies of low birth weight, fetal death and childhood cancers. The evidence of a genetic hazard related to exposure resulting from the intensive use of pesticides stresses the needs for educational programmes for farmers in order to reduce the use of chemicals in agriculture and to implement protection measures.

◆

[1]Dept. of Chemistry, Panjab University, Chandigarh
[2]Dept. of Physics ,Guru Jambheshwar Univ. of Sci. & Tech., Hisar

Water Management in Important Field Crops

✍ **Manjeet, Parveen Kumar and Kuldeep Singh**
Department of Agronomy
CCS Haryana Agricultural University, Hisar

Food and water are two of the most important necessities for survival, but with an increasing demand for food and a looming water crisis, a shortage of both may be on the horizon unless innovative technologies are developed. Water, especially, is becoming a fast precious commodity, as more and more people continue using water for the household, industry and agriculture. India has only about 4 per cent of the world's renewable water resources but is home to nearly 18 per cent of the world's population. It receives an average annual precipitation of 4,000 billion cubic meters (BCM) which is the principle source of fresh water in the country. However, there is wide variation in precipitation across different regions of the country. India has about 20 river basins. Due to increasing demand for domestic, industrial and agriculture uses, most river basins are water stressed. This is further accentuated by the fact that water demand is unevenly distributed across the country. Increasing demand from a growing population, coupled with economic activity, adds pressure on already stressed water resources. India is highly vulnerable to impacts of climate change on water resources due to its unique climate, geography and topography. Warming of the lower atmosphere will impact snowfall. glaciers and snow cover and crop water requirements; increase in extreme weather will impact incidence of floods and droughts; rising sea levels will in-crease flooding in coastal areas and seawater intrusion; rising temperatures will impact the quality of water in rivers and lakes and so on. Water management strategies suggested here will be helpful in lessening the vulnerabilities due to climate change and increase resilience of the society.

Importance of Water Management in Crop Production

Water is one of the most important inputs essential for the production of crops. Plants need it continuously during their life and in huge quantities. It profoundly influences photosynthesis, respiration, absorption, translocation and utilization of mineral nutrients and cell division besides some other processes. Both its shortage and excess affect the growth and development of a plant directly and consequently, its yield and quality. In India, however, rainfall is notoriously capricious, causing floods and droughts alternately. Its frequency distribution and amount are not in accordance with the needs of the crops. Artificial water supply through irrigation on one occasion and the removal of excess water through drainage on another occasion, therefore, becomes imperative, if the crops are to be raised successfully. Water management in India, thus, comprises irrigation or drainage or both, depending considerably on the environmental conditions, soil, crops and climate. It is a situation oriented entity.

Wheat : Optimum soil moisture for normal growth and development vary with the stage of plant growth. In wheat, crown root is formed near soil surface irrespective of depth of sowing. Crown root starts developing at the node near soil and successive underground nodes, which are closely spaced. Lateral buds at the node give rise to tillers. Tillering is directly related to soil moisture availability at CRI. Number of grains per ear and the grain size reduced drastically due to inadequate soil moisture at flowering and milk formation stages leading to low grain yield. In general, each week delay in irrigation at CRI stage resulted in about 2-3 q/ha reduction in grain yield. In general, 4-6 irrigations are needed for optimum yield under different wheat environments. First irrigation must be given at CRI stage (20-25 DAS) other irrigations should be given at late tillering, late jointing, flowering, milk and dough stages. The water requirement of wheat crop ranges from 400-600 mm in different critical stages of wheat crop for varying number of irrigations.

Critical stage of wheat as per water availability

Available irrigation	Critical stages
1	Crown Root Initiation (CRI)
2	CRI+ Late Jointing (LJ)
3	CRI+ Boot + Milk
4	CRI+ late Tillering(LT)+ LJ + Flowering (F) + Milk(M)
5	CRI+LT+LJ+F+M
6	CRI+LT+LJ+F+M+ Dough (D)

Under limited irrigation water supply, the following irrigation schedule may be followed :

If available water is only for one irrigation, it should be applied at CRI to Tillering.

If available water is for two irrigations, first irrigation at CRI to tillering and second 7 or 8 weeks after first irrigation (flowering).If available water is for three irrigation, the first at CRI, second and third at intervals of 6 to 7 weeks. Thus, the three irrigations should be given at CRI, flowering and milk stages for high yield.

Barley : It is generally grown as rainfed crop because it has low water requirement. It needs two to three irrigations to give good yield. If supply of

water is adequate, its efficiency should be increased by applying it at critical stages of growth. If only one irrigation is available, it should be given near active tillering stage (30-35 DAS). When two irrigations are available, one should be applied at active tillering and the other at flowering stage. On highly saline and sodic soils, frequent light irrigation give better results than fewer heavy irrigations.

Sorghum : In India, sorghum is pre-dominantly a rainfed crop both during monsoon and post-monsoon seasons. Irrigated sorghum grown from April to July, as summer crop, constitutes only 5 percent of the total area under sorghum. Although, sorghum is considered drought tolerant and able to give good yields under dryland farming. It responds very well to irrigation. Where rainfall is not sufficient and irrigation water is limited, irrigation should be based on avoiding water deficit during seedling (establishment) and primordial initiation stage and saving water by reducing water supply at vegetative and late maturity stages. The following irrigation schedule appear to be ideal, depending on the available water supply :

- If water supply is adequate for only two irrigations, they should be provided at seedling and primordial stages for near optimum yield.
- In addition to the above, two stages, flowering stage should receive priority if water is adequate for three irrigations.
- Four irrigations, one each at seedling, primordial, flowering and grain development stage appear to be adequate for realizing maximum grain yield even water is not a limiting factor.
- Water logging should be avoided, particularly during seedling establishment and flowering stage.

Chick pea : Gram is mostly, sown as rainfed crop, however, where irrigation facilities are available, give a pre-sowing irrigation. It will ensure proper germination and smooth crop growth. Generally, a crop on deep black soils is not irrigated; crop on light soil is given two to four irrigations. If water is available for two irrigations, they should be applied at branching and pod formation and if it is available for four irrigations, it should be applied at sowing, branching, flowering and pod filling. No irrigation should be given at flowering time of grain crop. A light irrigation should be given because heavy irrigation is always harmful to gram crop. Excess of irrigation enhances vegetative growth and depresses grain yield.

Cowpea : Rabi and summer crops receive two to three irrigations at critical stages of flowering and pod formation.

Rapeseed and mustard : Due to scanty winter rainfall, brassicas show favuorable response to irrigation. About 60 percent of the total area under brassicas is under irrigation. Among the brassicas, raya is most responsive to irrigation. Flowering and pod formation stages are most sensitive to soil moisture stress. Scheduling irrigation at these two stages increased the seed yield by 30 percent. Pre-flowering and pod formation stages responded significantly to irrigation. Additional irrigation 30DAs may be given if irrigation water is not a limiting factor. Ridge and furrow system results in yield advantages with around 20 percent saving in irrigation water. The total water requirement for brassicas ranges from 450 to 600 mm depending on soil types, ET, crop duration and method of irrigation. ◆

(from page 30.....)

crop production in India. The major **rabi** crops are wheat, mustard, barley, potato, onion and gram etc. Global warming may also threaten India food security if there is a negative effect on agriculture. Although, the effect of increasing CO_2 concentrations will increase the net primary productivity of plants, but climate changes and the changes in disturbance regimes associated with them, may lead either to increased or decreased net eco-system productivity. In many tropical and subtropical regions, potential yields are projected to decrease for most projected increases in temperature. The impacts of elevated CO_2 should be considered among others, in the context of, (A) changes in air temperature, particularly nocturnal temperature due to increase in CO_2 and other trace gases and changes in moisture availability and their effect on vegetative versus reproductive growth; (B) need for more farm resources (e.g. fertilizers); and (C) survival and distribution of pest populations, thus developing a new equilibrium between crops and pests. Indirectly, there may be considerable effects on land use due to snow melt, spatial and temporal rainfall variability, availability of irrigation, frequency and intensity of inter- and intra-seasonal droughts and floods, soil organic matter transformations, soil erosion, change in pest profiles, decline in arable areas due to submergence of coastal lands and availability of energy. All these can have tremendous impact on agricultural production and hence, food security of any region. ◆

नव वर्ष पर विशेष

कविता

नव वर्ष की सभी को शुभकामनाएं!

नव वर्ष सभी के लिए मंगलमय हो!!

नव वर्ष, नव वर्ष, नव वर्ष।

हर वर्ष आता है नव वर्ष ।।

नूतन उमंगें लेकर, नए-नए सपने लेकर।

नई सुहानी सुबह व सुनहरा प्यारा दिन।।

परन्तु ... नव वर्ष आने से क्या बदलता है?

हमारे विचार, हमारी सोच, हमारी आदतें ...

नहीं, कुछ भी नहीं बदलता...

सब कुछ वही होता है जो पिछले वर्ष होता था...

नव वर्ष ... केवल एक नया कैलेंडर

नई तिथि, नया सन्, नया दिवस...

और कुछ नहीं ...

एक जनवरी... बधाइयों का दिन

खुशियों का दिन, सैलिब्रेशन का दिन

परन्तु इसका क्या लाभ ...?

जब तक हम अपनी सोच, अपने कर्म

अपनी विचार धारा, आदतें नहीं बदलते...

तब तक नव वर्ष के कोई मायने नहीं ...

आओ ... नव वर्ष में कुछ नया करें।

नई सोच, नए इरादे, नई कसमें-वादे

और प्रण करने होंगे...

इन्हें कार्यान्वित करना होगा

इन्हें अपनाना होगा।

तभी नव वर्ष का महत्व है।

तभी नववर्ष मंगलमय है।।

– सुषमा आनन्द